महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० अंक : ११

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: ज्येष्ठ कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर

वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.

त्रिवार्षिक-५८० रु.

आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.

एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर

द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर

त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर

आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.

एक प्रति - ३ पाउण्ड

एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०

ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जून प्रथम २०१८

अनुक्रम

०१. कर्नाटक चुनावों का निहितार्थ	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-७	डॉ. धर्मवीर	०६
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०९
०४. राष्ट्र-रक्षा कैसे	आ. उदयवीर शास्त्री	१५
०५. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		१७
०६. गृही भूत्वा वनी भवेत्	तपेन्द्र वेदालङ्कार	१९
०७. मानवता को नष्ट करता, जातिवाद	प्रकाश आर्य	२५
०८. शङ्का समाधान- २६	डॉ. वेदपाल	२८
०९. 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३०
१०. हर मन्त्रपुरुष अमर होता है	डॉ. चेतना वेदी	३१
११. संस्था-समाचार		३३
१२. ऋषि की मथुरा जन्म-शताब्दी का ऐतिहासिक भाषण...		३४
१३. रामप्रसाद 'बिस्मिल'	सोमेश 'पाठक'	३७
१४. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

कर्नाटक चुनावों का निहितार्थ

राष्ट्र को सभी क्षेत्रों में प्रभावित करने वाली संस्थाओं में आज सबसे प्रमुख राजनीति है। वह सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक इत्यादि सभी मुद्दों पर प्रभावी रहती है और उसकी धारा को अधिकांशत: वांछित दिशा में मोड़ने का सामर्थ्य रखती है। राष्ट्र के महत्त्वपूर्ण और जागरूक अंग होने से आर्यसमाज भी इसके प्रभावों से अछूता नहीं रहता। यद्यपि आर्यसमाज ने विभिन्न विरोधी एवं समर्थक सरकारों को स्वतन्त्र भारत में देखा है, आजादी से पूर्व भी आर्यसमाज विदेशी शासन को न केवल देख रहा था, प्रत्युत उसके विरोध में भी अपनी पूर्ण शक्ति के साथ डटा खड़ा था। महर्षि ने स्वराज्य का जो मन्त्र आर्यजनों को प्रदान किया था, उस मन्त्र से उनके अनुयायियों ने संपूर्ण राष्ट्र को गुंजायमान किया था। यह हमारी राष्ट्र-भक्ति, निष्ठा, वीरता, बलिदान और पराक्रम का इतिहास है। वेदज्ञान की सार्वभौमिकता, आर्षमूल्यों का मानवीय स्वरूप, वैदिक धर्म का मानवधर्म होना हम अपने साहित्य और कर्त्तव्य द्वारा सिद्ध कर चुके हैं, पुनरपि आर्यों को पुन: पुन: मानवता और राष्ट्र की विरोधी शक्तियों से दो-चार होना पड़ता है। चूंकि हमारे राष्ट्र में कोई भी दल सत्ता में आकर सरकार बना सकता है। अत: इसमें किसी को कोई दिक्कत नहीं कि सरकार किस दल की है, परन्तु अब अनेक राजनीतिक दलों की यह आदत बनती जा रही है कि वे सत्ता पाने के लिए देश की जनता को छद्म आन्दोलनों में धकेलने लगे हैं। वे इस बँटे हुए समाज के विभिन्न मत-मतान्तरों और जातियों के बीच की खाई को प्रलोभनों द्वारा और चौड़ा करने का प्रयास करते हैं। यह समाज, राष्ट्र और मानवता के लिए भी अतीव हानिकर दुष्प्रयास है। स्वदेशी दलों और सरकारों से यही आशा की जानी चाहिए कि वे राष्ट्र और समाज के घटकों को इस तरह जोड़ने का कार्य करेंगे कि वह संपूर्ण पृथ्वी के मनुष्यों के लिए एक उदाहरण और प्रेरणा बने। विभिन्न मत-मतान्तरों और विचारधाराओं के बावजूद पक्षपातरहित सत्ता-परिवर्तन लोकतन्त्र की विशिष्टता है। इसे सदैव ध्यान में रखा जाना चाहिए।

हमें भूलना नहीं चाहिए कि सदियों की महापुरुषों की मेहनत के बल पर हम सांस्कृतिक, भौगोलिक और राजनीतिक रूप से एक हो सके हैं। अत: यह एकता हमारे लिए हमारे शत्रुओं के सम्मुख एक कवच की तरह है। इसे सत्ता प्राप्ति के लिए नष्ट करने का उपाय नहीं किया जाना चाहिए।

अभी सम्पन्न हुए कर्नाटक चुनावों के परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि राष्ट्र या प्रदेश की जनता विभाजनकारी मुद्दों को स्वीकार नहीं करती, भले ही ये मुद्दे उनके अधिकार के रूप में उन्हें लुभाने के लिए प्रस्तुत किए जाएँ। जनता ने जिसे चुना उसने राष्ट्र और समाज को बाँटने वाला कोई वक्तव्य नहीं दिया, तुष्टीकरण की बात नहीं की। इसके लिए वह प्रशंसा का पात्र हैं।

अभी तक के कुछ विशिष्ट चुनावों से यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक दल दूरगामी और श्रमसाध्य मुद्दों, यथा समाजसेवा इत्यादि से दूर रहकर भावनात्मक और सुगम किन्तु लोकलुभावन मुद्दों के प्रचारक बनकर चुनाव जीतना चाहते हैं। देश की कानून-व्यवस्था, शिक्षा की गुणवत्ता और सुलभता, स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना, सामान्य जनता की सुरक्षा, नैतिक मूल्यों के गिरते स्तर को ऊँचा उठाना, महँगी और दुष्प्राप्य न्यायप्रणाली को सुलभ बनाना, देश के वास्तविक इतिहास और अपनी महान् परम्पराओं से परिचय पाना, नागरिकों में प्रबल कर्त्तव्यबोध इत्यादि पर सरकारों को कार्य करना चाहिए और विपक्षी दलों को सप्रमाण सरकार को इन मुद्दों पर सोचने को बाध्य करना चाहिए। सभी दलों की इस पर सहमति विधिसम्मत होनी चाहिए। कोई भी दल जाति, धर्म, संप्रदाय, क्षेत्र इत्यादि के नाम पर न तो दुष्प्रचार करे और न इनको मुद्दा बनाकर चुनाव लडे। ऐसी स्थिति में सभी दलों के लोग अपने देश

और समाज की समस्याओं को न केवल जानेंगे-समझेंगे बल्कि अपने इतिहास-संस्कृति से परिचय भी प्राप्त कर सकेंगे, तभी वे इस महान् देश की जनता के सच्चे प्रतिनिधि भी कहला सकेंगे। छद्म मुद्दों से चुनाव जीतकर सत्ता पाने में सफलता मिल भी जाए, तो मानवता की हानि होगी, क्योंकि कहाँ तो हम विश्वभर के मानवों को एक करके अपने परिवार को विस्तृत करना चाहते हैं और कहाँ अपने स्वदेशी भाइयों को ही परस्पर शत्रुता की ओर ढकेल रहे हैं।

अत: आज के समय में प्रबल हो चुकी राजनीति नामक संस्था को देश और समाज का वास्तविक सेवक बनना होगा, प्रहरी बनना होगा और सत्ता के लोभ-लालच को परे रखकर सेवा-भावना से कार्य करना होगा, तभी देश और विश्व का कल्याण संभव हो सकेगा, अन्यथा राजनीतिक छल-छद्म से कुछ लोग और धनी होते जाएंगे और अधिकांश जनता निर्धन और अज्ञानी रहकर परस्पर वैमनस्य की आग में झुलसती रहेगी।

भारतीय संविधान में भी स्पष्ट निर्देश है कि शासन **''लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व का निर्माण करे जो धर्म और भेदभाव से परे हो।''** इस आधार पर राष्ट्रीय एकता को समृद्ध करने की चुनौती सदैव शासन के सम्मुख रहती है। अत: विचारणीय है कि राजनीतिक स्वार्थों को साधने में राष्ट्रीय मूल्यों की आहुति देना कहाँ तक उचित होगा! आर्यसमाज का इतिहास इस तथ्य का साक्षी रहा है कि राष्ट्रीय मुद्दों के समय आर्यसमाज ने कहीं पर समझौता नहीं किया। कहा भी गया है कि सत्य का सत्य में समन्वय कैसा और असत्य से सत्य का समन्वय कैसा! महर्षि दयानन्द ने अनेक स्थानों पर दिए गए समझौतों के प्रस्तावों को नकार दिया था। क्योंकि वे समझौते वेद-विरुद्ध थे। भारतीयों में आत्मगौरव, स्वाभिमान और मानव-कल्याण के व्यापक दृष्टिकोण का विकास अपेक्षित है। राजनीति की सर्वोत्कृष्टता समाज के सभी वर्गों, भाषाओं और क्षेत्रों के समग्र दृष्टिकोण के पल्लवन और पुष्पन करने हेतु होनी चाहिए। इनका संवर्द्धन ही राष्ट्रीय एकता का जनक है। भारतीय राजनीति में सत्य, शिव और सुन्दर की भावना इसी जीवन दृष्टि को स्पष्ट करती है कि हम विभाजनकारी तत्त्वों को राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति का साधन न बनायें, क्योंकि इससे राष्ट्रीय एकता खण्डित होने की संभावना बनी रहती है। **भारत-भारती** का यह भाव आज और ज्यादा प्रासंगिक हो गया है-

उच्छिन्न होकर अर्द्धमृत-सा छटपटाता देश है।
सब ओर क्रन्दन हो रहा है, क्लेश को भी क्लेश है।

राजनीतिक दलों की वैचारिक प्रतिबद्धता आज अत्यन्त सोचनीय हो गई है। हमें ध्यान देना चाहिए कि विवेक-आधारित राजनीति भारत के मूल में विद्यमान रही है और इसीलिए भारत विश्व के अन्य देशों से विशिष्ट रहा है। राजनीतिक दलों की जीत-हार मायने नहीं रखती। चुनावों में जिन मूल्यों को आधार बनाकर कर्नाटक के परिणाम आए हैं ये इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि विघटन और विनाश की लीला, सामाजिक विद्वेष की अग्नि और राष्ट्रीय एकता से खिलवाड़ जैसे मुद्दों को उछालकर राजनीतिक दलों को जीत नहीं मिल सकती। इसलिए कर्नाटक चुनावों का निहितार्थ स्पष्ट है कि समग्र विकास का दृष्टिकोण एवं राष्ट्रीय एकता और अंखडता का उद्घोष ही भारतीय जनता को स्वीकार्य है। भले ही कुछ मुद्दों को मीडिया और सोशल मीडिया पर मनोरंजन के लिए प्रयुक्त किया जा सके, लेकिन भारतीय समाज के भाईचारे के ताने-बाने को छिन्न-भिन्न नहीं किया जा सकता और होना भी नहीं चाहिए। आर्यसमाज सजग प्रहरी के रूप में इस विचार के संरक्षण में सदा अग्रणी रहा है और रहेगा। वेद में सर्वत्र एकता की ओर बढ़ने की बात कही गई है कि प्रजाओं के विभिन्न घटक मन, वचन और संकल्प से एकता को प्राप्त होवें। वहाँ कहा गया है-

सं वो मनांसि सं व्रता समाकूतीर्नमामसि।
अमी ये विव्रता स्थन तान्वः सं नमयामसि।।

(अथर्ववेद ३/८/५)

- दिनेश

मृत्यु सूक्त-७

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां, यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि, मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्।।

हम वेद-ज्ञान की इस शृंखला में ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८ वें सूक्त की चर्चा कर रहे हैं। यह सूक्त मृत्यु-सूक्त कहलाता है। पिछली चर्चा में हमने पहले मन्त्र में कही गयी बातों पर विचार किया था। हमने देखा था कि मृत्यु सामान्य रूप से सभी को प्राप्त है। जिसका जन्म है, उसकी मृत्यु अवश्यंभावी है, तो इस परिस्थिति में, यहाँ एक अन्तर बताया गया था कि मृत्यु लोगों को उसके भिन्न-भिन्न रूपों में प्राप्त होती है। यह प्राप्ति मृत्यु के ऊपर निर्भर नहीं करती, मृत्यु जिसको प्राप्त होती है उस पर निर्भर करती है। अर्थात् वो मृत्यु को कैसे लेता है, यह हमने विचार किया, यह भी देखा कि जो लोग यहाँ पर हैं वो उससे कैसे प्रभावित होते हैं। मृत्यु आने पर कैसी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं? संसार में जो लोग मृत्यु को एक भयावह और दुःख देने वाले कारण के रूप में देखते हैं उनको मृत्यु कैसी लगती है और जो मृत्यु को एक सहज प्रक्रिया मानकर चलते हैं, उनको मृत्यु कैसी लगती है? इस मृत्यु को समझाने के सन्दर्भ शास्त्र में बहुत-बहुत स्थानों पर आए हैं। यजुर्वेद के एक प्रसिद्ध मन्त्र में मृत्यु के संबन्ध में जो विचार किया है हम यहाँ उदाहरण के रूप में उसे देख सकते हैं।

एक मन्त्र बहुत प्रसिद्ध है जो मृत्यु के प्रसंग में, जीवात्मा की नित्यता के प्रसंग में या शरीर की, भौतिकता की अनित्यता के प्रसंग में उद्धृत किया जाता है, बोला जाता है-'**वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्। ओ३म् क्रतोस्मर क्लिबे स्मर कृतं स्मर**'। मृत्यु का दर्शन जैसे ऋग्वेद के 'मृत्यु' सूक्त के मन्त्रों में प्रतिपादित किया गया है, यजुर्वेद के इस मन्त्र में भी प्रतिपादित है। **वायु, अनिल, अमृत** यहाँ तीन शब्द हैं, जीवात्मा जो सदा गतिशील रहता है और वो कभी मरता नहीं है, समाप्त नहीं होता है, उसकी वस्तुस्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता है। वो '**अमृतम्**' नष्ट न होने वाला है। **इदम् शरीरम् भस्मान्तम्**-यह शरीर समाप्त हो जाने वाला है। समाप्त करने का भी विशेष प्रकार बताया है। हम क्योंकि यात्रा यहाँ से पूरी करके दूसरी यात्रा पर जा रहे हैं, तो हमें यह सोचना है कि यहाँ क्या छोड़कर जाना है और आगे क्या लेकर जाना है। **क्रतो स्मर कृतम् स्मर, क्लिबे स्मर**-अर्थात् जब हम कहीं भी यात्रा के लिए निकलते हैं, जहाँ से भी यात्रा प्रारम्भ करते हैं, वहाँ हमारे लिए विचारणीय बात रहती है कि हम यहाँ क्या छोड़कर जायेंगे, और यहाँ से हमें क्या लेकर जाना है। वैसे ही ये मृत्यु हमारा पड़ाव है। यह जन्म एक यात्रा का प्रारम्भ है, मृत्यु उस यात्रा की समाप्ति है। लेकिन यात्रा की समाप्ति शाश्वत नहीं है, वह फिर एक नई यात्रा का प्रारम्भ है, इसलिए वो पहली यात्रा का समापन है। यहाँ पर एक बात कही गई है, जो ध्यान देने योग्य है। वो कहता है कि यह '**अमृतम्**' है। उसकी मृत्यु नहीं होती, उसका परिवर्तन नहीं होता, उसका बदलाव नहीं होता और '**शरीरम् भस्मान्तम्**'- शरीर जो है वो भस्म हो जाने वाला है। यहाँ एक और अच्छी बात समझने की है। जो लोग जीवात्मा को या तो परमात्मा का अंश मानते हैं या जो लोग जीवात्मा को सर्वव्यापक मानते हैं, ऐसी स्थिति में यदि किसी की मृत्यु होती है तो वह मृत्यु कितने अंश में होगी या किसकी होगी? यदि हम शरीर से बाहर भी, बाहर की वस्तु में भी या बाहर के प्राणी में भी जीवात्मा की कल्पना करें, तो जो व्यवहार जीवात्मा के साथ यहाँ घटित हो रहा है वही व्यवहार दूसरी जगह भी घटित होना चाहिए। ऐसा होता नहीं है। एक तो स्वामित्व का प्रभाव इतनी ही दूरी पर पड़ता है जितनी दूरी तक स्वामी की उपस्थिति का प्रभाव काम करता है। जैसे एक व्यक्ति का घर है, उसके घर तक की सीमा में उसकी इच्छानुसार व्यवहार होता है। एक अधिकारी है उसके अधिकार क्षेत्र के अनुसार व्यवहार होता है। एक

शासक है, उसका देश के अुनसार व्यवहार होता है। वैसे ही इस संसार में जो सारा व्यवहार-व्यापार है उसका स्वामी भी उसी तरह का है जिसे हम परमात्मा कहते है।

हमारे यहाँ जो संचालन की स्थिति है, वो स्पष्ट रूप से दो तरह की दिखाई देती है। एक संचालन वैश्विक नियमों से होता है, समस्त ब्रह्माण्ड में एक ही तरह का नियम काम कर रहा है। वो नियम हम पर भी वैसा ही काम करता है, जैसा कि दूसरे पर करता है, जैसा कि तीसरे पर इसी प्रकार अन्य स्थानों पर भी करता है, किन्तु एक नियम में अन्तर है, वो व्यक्ति से व्यक्ति के जो स्थान है, व्यक्ति से व्यक्ति का जो रूप है, व्यक्ति से व्यक्ति की जो वैचारिक भिन्नता है, उसमें अन्तर आता है और वो अन्तर स्वामित्व की भिन्नता को प्रकाशित करता है। अर्थात् जो व्यवहार मैं अपने शरीर के साथ करता हूँ, वह व्यवहार मैं किसी दूसरे शरीर के साथ नहीं कर सकता। क्यों नहीं कर सकता, यही इसका सबसे बड़ा प्रमाण है कि वहाँ मेरा स्वामित्व नहीं है। जहाँ मेरा स्वामित्व है, वहाँ मेरा प्रभाव काम करता है और जहाँ मेरा स्वामित्व नहीं है, वहाँ वो प्रभाव काम नहीं करता है। इसलिए यह सोचना कि आत्मा व्यापक होकर इस शरीर का संचालन करता है ऐसा नहीं है। शरीर में दोनों नियम काम कर रहे हैं और दोनों के अन्दर निश्चित रूप से विभाजन है। अर्थात् एक-दूसरे के अधिकार क्षेत्र में किसी का प्रवेश नहीं है। शरीर की जिस इकाई का स्वामित्व जिसके पास है, उसके अधिकार और उसके काम वहीं तक सीमित हैं। उसकी इच्छा में, उसके कार्य में कोई दूसरी शक्ति बाधक नहीं है बल्कि सहायक है। उस व्यवस्था को उसने बनाकर दिया है ताकि वह अपनी अलग व्यवस्था चला सके। यह व्यवस्था पूरक के रूप में हमारे लिए है, बाधक के रूप में नहीं।

यह दो बातें हमको यदि स्पष्ट हो जायें तो यह मन्त्र हमारी समझ में बहुत आसानी से आ जाता है कि **वायुः अनिलम् अमृतम्**-यह जो कर्मशील जीवात्मा है, यह अमृत है। इस संसार में गतिशील है एक, कर्मशील हैं दो और अमृत हैं तीन। अर्थात् यह जीवात्मा अमृत होने के साथ-साथ सदा गतिशील है। गतिशील वस्तु वो नहीं हो सकती जो व्यापक हो, जो सभी जगह एकरस भरा हुआ हो तो उसका आना-जाना, होना न होना आदि बातें नहीं बन सकतीं, कर्म भी उसका उसके लिए नहीं हो सकता, क्योंकि वह तो पूर्णकाम है। उसके पास कोई अधूरापन नहीं है। हमारा शरीर जहाँ है, वहाँ हमारा अस्तित्व है, साथ ही यह शरीर हमारे होने के साथ, हमारे दूसरी जगह न होने को भी प्रमाणित करता है, न होने को भी सिद्ध करता है और इस न होने से हमारी दूसरी जगह की पूर्णता नहीं है, बल्कि हमारी अपूर्णता है, यह भी सिद्ध होता है। हमारी अपूर्णता ही, उसकी पूर्णता से भिन्न है। हमारे और उसके अन्दर जो भेद है, वो भिन्नता हमारे अन्दर परिवर्तन के कारण है। उसकी मृत्यु क्यों नहीं होती है? हमारी मृत्यु क्यों हो जाती है? वो दुःखी क्यों नहीं होता, हम दुःखी क्यों हो जाते हैं? उसके पास इच्छायें क्यों नहीं होतीं, हमारे पास इच्छायें क्यों होती हैं? उन सबका एकमात्र जो कारण और आधार है, वो है हमारी अपूर्णता और उसकी पूर्णता। हमारी हर इच्छा, हर दुःख केवल यह बताने के लिए है कि हमारे पास अधूरापन है। हमारे पास वो चीज़ नहीं है इसलिए वह दुःख का हेतु है, दुःख का कारण है। यदि वो वस्तु मिल जाती है तो उस वस्तु के कारण होने वाला दुःख नहीं हो सकता। फिर भी यदि कोई दुःख होगा तो वह किसी और कारण से होगा, अन्य वस्तु के अभाव से होगा, किसी और अधूरी इच्छा के कारण होगा।

वायुः, अनिलम् अमृतम्- जीवात्मा एकदेशीय है, अणु है, गतिशील है और कर्मशील है। यह हमारी अर्थात् जीवात्मा की विशेषतायें हैं। इसके अन्दर कोई परिवर्तन नहीं है। परिवर्तन किसमें है-**भस्मान्तम् शरीरम्**। यह शरीर जन्म से मिलता है, लेकिन जितना हमको जन्म में मिला था, वो गर्भ से बड़ा था और जितना जन्म में मिला वो संसार की आयु के साथ बढ़ता है। युवावस्था तक बढ़कर, वृद्धावस्था में घटता है और मृत्यु तक आकर समाप्त हो जाता है। हमारा जो घटना और बढ़ना है यह एक प्रमाण है कि हमारी यात्रा प्रारम्भ हुई है और समाप्ति की ओर जाती है। जैसे सूर्य का उदय होता है, तो सूर्य मध्याह्न तक ऊपर की ओर जाता है और मध्याह्न के बाद अस्ताचल की ओर जाता है। उसका नीचे से ऊपर जाना और ऊपर से नीचे आना उसकी गति को रेखांकित करता है। सूर्य आया है

किन्तु उस रास्ते लौटा नहीं है। यदि शाम को जाकर उसी रास्ते लौटा होता तो हमें कोई सन्देह नहीं होता कि वह दूसरी जगह नहीं है। लेकिन एक व्यक्ति यहाँ से तो गया, उसी रास्ते नहीं लौटा, किन्तु फिर आ गया, प्रकट हो गया इससे यह पता लगता है कि वो जरूर किसी अन्य रास्ते से, अन्य मार्ग से लौटकर आया। उसका आना उस यात्रा की एक परिक्रमा को बताता है। एक चक्र को बताता है। वो चक्र कितना भी छोटा हो, कितना भी बड़ा हो, चक्र तो है। चक्र के बिना कोई भी अधूरा स्थान, वस्तु, कार्य, प्रकार निश्चित रूप से किसी पूरे की ओर इंगित करते हैं। जब किसी गोलाकार चक्र को आप आधा कहते हैं, तो निश्चित रूप से वो पूर्ण भी होगा। पूर्ण हुए बिना आधा तो बन ही नहीं सकता। हम आधे का प्रत्यक्ष कर रहे हैं, उदय होने से अस्त होने तक प्रत्यक्ष कर रहे हैं। लेकिन अस्त होने से उदय होने की यात्रा हमारे सम्मुख नहीं है। सम्मुख नहीं है, किन्तु हम उससे निषेध नहीं कर सकते, इंकार नहीं कर सकते क्योंकि लौटना उस रास्ते तो हुआ नहीं है और लौटकर आया अवश्य है, तो जिस भी रास्ते से आया वो रास्ता आधे चक्र को पूरा करता है। इसलिए जैसे सूर्य उदय होकर मध्याह्न में ऊपर जाता है और सायंकाल अस्ताचल को प्राप्त होता है, वैसे ही सायंकाल अस्त हुआ सूर्य वहाँ की यात्रा करके अगले दिन प्रात:काल के समय तक उदयाचल को प्राप्त हो जाता है और इस तरह से यह पूरा चक्र बन जाता है। भले ही हमको आधा दिखाई देता है और आधार दिखाई नहीं देता, लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं रहता कि यह चक्र पूरा है, अन्यथा एक ओर गति करते हुए फिर उसी स्थान पर आना संभव नहीं है। यदि हम वापस लंबाई में जाकर आयेंगे तो आने का रास्ता वही होगा जिससे हम गए थे। लेकिन जब हम गोल घूमकर आयेंगे तो जाने के रास्ते से आने का रास्ता अलग हो जाता है। इससे ये पता लगता है कि हमारी गति चक्राकार है। हम भ्रमण में ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर, फिर ऊपर से नीचे इस तरह से चल रहे हैं। यहाँ भी इस मन्त्र में वही बात कही गई है कि यह आत्मा तो सदा जीवित रहने वाला है, इसकी कभी भी मृत्यु नहीं होती है, तो फिर मृत्यु किसकी होती है, इसकी चर्चा मन्त्र के अगले भाग में की गई है।

व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

पता- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

कुछ तड़प–कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

उठो! आप भी साथ दो– धर्मप्रचार तथा संगठन के कई साधन हैं, परन्तु घूम-घूमकर प्रचार तथा सम्पर्क से बड़ा कोई साधन नहीं है। कुछ विरले सज्जन ही अब वाणी व लेखनी से सम्पर्क साधकर प्रचार करते हैं। श्री अभय आर्य हरियाणा में आचार्य बलदेव जी के संग ग्राम-ग्राम में घूम-घूम कर प्रचार करते रहे। अब भी अपना अवकाश का सारा समय धर्म-प्रचार में देते हैं। हरियाणा सभा उन्हें सहयोग करती है। परोपकारिणी सभा भी अब सहयोग कर रही है। यह वर्ष पं. चमूपति गृह-निष्कासन शताब्दी वर्ष है। बहावलपुर की मुस्लिम स्टेट से ऋषि-भक्ति के कारण निष्कासित किये गये। आप न दबे और न झुके। ऋषि-भक्ति का कैसा अनूठा उदाहरण! पण्डित चमूपति जी ने चार भाषाओं में ऋषि-जीवन पर सैंकड़ों पृष्ठ लिखकर देश व मनुष्य समाज पर भारी उपकार किया है।

'परोपकारी' ने आर्यों को ऋषि-जीवन के लिये इस बलिदान को मनाने की सत्प्रेरणा दी। किसी संस्था व समाज ने इसके लिये अभी तक तिनका भी नहीं तोड़ा। युवकों की एक टोली को लेकर जून मास में अभय जी पंजाब के कुछ नगरों व ग्रामों में इस शताब्दी का सन्देश लेकर निकलेंगे। मैंने उन्हें राजपुरा टाऊनशिप से इसे आरम्भ करने का सुझाव दिया है। ख़ैरपुर टामेवाल व बहावलपुर के लोगों का यह नगर श्री पण्डित चमूपतिजी के भाईजी ने ही बसाया था। ख़ैरपुर के हिन्दुओं के पुरोहित पण्डित जी के बड़े भक्त हैं। मैं भी इन दो स्थानों पर साथ रहूँगा। आर्यो! पं. चमूपति आर्य जाति के एक निर्भीक, निर्लोभी और तपस्वी विचारक थे।

महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी श्रद्धानन्द और स्वामी श्री स्वतन्त्रानन्द सरीखी विभूतियाँ उन पर गर्व करती थीं। पं. लोकनाथ, पं. शान्तिप्रकाश, पं. त्रिलोकचन्द्र, महाकवि सरशार और शरर जी सरीखे नररत्नों को जन्म देने वाले क्षेत्र का स्मरण करते हुये इन नररत्नों का भी कुछ तो ऋण चुका पायेंगे। 'कुल्लियात' के दूसरे भाग का कार्य सिरे चढ़ाकर 'पं. चमूपति के शब्दों में वैदिक दर्शन' पुस्तक लिखकर भेंट करूँगा। प्रकाशन करने वाले युवक मेरे सामने हैं। मैंने अभय जी को कहा है कि पंजाब में आचार्य भद्रसेन जी, प्राचार्य रमेश जीवन, आर्य रत्न डॉ. ऋषि कुमार आर्य तथा श्री सुखदेव आर्य करतारपुर का आशीर्वाद लेकर आगे बढ़ो। चेतना का संचार करो। पंजाब में संगठन अब छिन्न-भिन्न है। प्रचार बन्द न होने दो।

'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर' का दूसरा भाग– पहले भाग का कार्य पूरा करके कुछ रुकना चाहता था। उत्साही धर्मवीर युवकों के चलभाष आने आरम्भ हो गये। अगले ही दिन जी-जान से दूसरे भाग का कार्य आरम्भ कर दिया। श्रीयुत राजवीर आर्य आर्यसमाज की अगली पीढ़ी में इस्लाम व ईसाई मत का ठोस ज्ञान रखनेवाले इकलौते विद्वान् हैं। आपने इस ग्रन्थ के सम्पादन विषयक ठोस सुझाव देते हुये अपने लिये कोई आदेश माँगा। मैंने कहा, ''मैं कुछ नहीं कह सकता। आप सभा को जितना भी आर्थिक सहयोग दे सकते व दिलवा सकते हैं, वह स्वयं सोचें।'' उन्होंने वचन दिया है कि पूरा सहयोग सभा को दूँगा। राजवीर जी विजया बैंक के एक प्रतिष्ठित अधिकारी हैं। अब आप उन्नति पाकर और ऊँचे पद पर मुम्बई महानगरी स्थानान्तरित हो गये हैं। मैंने उन्हें कहा है कि मायानगरी मुम्बई से सभा को दो सौ-ढाई सौ अग्रिम सदस्य ही दिलवा दो। मुम्बई में नेता तो बहुत हैं आप वहाँ नये सुयोग्य युवकों को खोजें और आर्यसमाज के साथ जोड़ें। इस कार्य को आर्यसमाज के नेता नहीं कर सकते।

श्री वागीश जी से वह परिचित हैं। ऋषि मेला अजमेर आने वाले महाराष्ट्र, गुजरात के भाई उन्हें जानते ही हैं। कभी समय निकालकर मैं पूना, नासिक, गुंजोटी, औराद और शौलपुर तक उनके साथ एक यात्रा पर निकलूँगा।

श्रीमती हरदेवी– चौथी बार इस स्तम्भ में श्रीमती हरदेवी पर लिख रहा हूँ। प्रयाग के श्री सुरेश जी मेरे सम्पर्क में हैं। वह हरदेवी जी पर कार्य कर रहे हैं। हरदेवी जी की एक छोटी महत्त्वपूर्ण पुस्तक वह मुझे भेज देंगे। इसे परोपकारिणी सभा में सुरक्षित रखा जावेगा। हरदेवी

जी कितनी बार सम्राज्ञी विक्टोरिया से मिलीं, यह आगे चलकर सप्रमाण बताया जायेगा। दो बार सम्राज्ञी से उनकी भेंट का तो अभी उल्लेख किया जायेगा। सम्राज्ञी की जुबली पर कई भारतीय महारानी से मिले, परन्तु उस समय आर्यसमाज के प्रतिनिधियों श्रीयुत लक्ष्मीनारायण जी, रोशनलाल जी तथा हरदेवी जी की महारानी से भेंट औरों से निराली थी। इससे देशवासियों का सिर ऊँचा हो गया।

उसी काल में लंदन में भारतीय उपनिवेशों की वस्तुओं की एक प्रदर्शनी आयोजित की गई। हरदेवी जी तथा इनके साथ वालों को निमन्त्रण दिया गया। हरदेवी जी अपनी चार वर्षीया भतीजी को लेकर वहाँ पहुँची। अपने आत्म-परिचय में आपने लिखा है कि महारानी हमारे पास होकर गईं और चार मिनट तक मेरी भतीजी को स्नेह से देखती रहीं। भारतीय वेश में वह नन्हीं बच्ची बहुत सुन्दर लग रही थी। अंग्रेज स्त्रियाँ उसे 'नन्हीं भारतीय राजकुमारी' कहकर दुलारती रहीं।

सन् १८८७ में महारानी की जुबली की धूम थी, तब हरदेवी जी ने उस शोभायात्रा में महारानी को देखा। तब आपने हिन्दी में लंदन जुबली पर एक पुस्तक लिखी जिसे आपके पिता श्री कन्हैयालाल इन्जीनियर ने सोत्साह प्रकाशित किया।

उसे ईसाई न बनाया जा सका- श्रीमती एनीबीसेन्ट तथा श्री फ्रैड्रिक पैंकट से आपकी भेंट होती रहती थी। श्रीमती लार्क नाम की एक महिला जो भारत में रह चुकी थी, उसने पंडिता रमाबाई का उदाहरण देकर हरदेवी को ईसाई बनाने के लिये प्रबल प्रेरणायें दीं, परन्तु वह हरदेवी को धर्मच्युत न कर सकी। हरदेवी जी ने अपने आत्म-परिचय में यह घटना दी है। हरदेवी को ब्रह्मसमाज आदि के साथ जोड़ने का मिथ्या इतिहास गढ़ने वालों को अपने कुकृत्य पर लज्जा आनी चाहिये।

श्री दयालसिंह मजीठिया और आर्यसमाज- आदरणीय प्रकाश आर्य जी ने किसी से सुनकर या किसी पुस्तक में पढ़कर अपने एक लेख में यह लिख दिया कि ऋषि जब अमृतसर पधारे तो श्री दयालसिंह मजीठिया उनके सम्पर्क में आये, प्रभावित हुये और उन्हीं की कोठी पर आर्यसमाज की स्थापना की गई। यह लेख प्रकाशित करने से पूर्व मुझे मान्या ज्योत्स्ना जी ने दिखा दिया। उन्होंने ऋषि-जीवन पर कार्य किया है सो उन्हें इस पर शङ्का हुई।

मैंने तत्काल इसे रोक लिया। श्री प्रकाश जी से चलभाष पर बात न हो सकी। इतिहास-प्रदूषण कम्पनियाँ अपने मिशन के लिये सक्रिय हैं। चतुर लेखकों के कारण कोई भी भ्रमित हो सकता है। उनसे मेरा निवेदन है कि यह गढ़न्त एक विशुद्ध गप्प है। श्री मजीठिया ऋषि से मिले अवश्य परन्तु रुष्ट होकर चले गये। वह दूसरे की तो सुनते नहीं थे। उनका ज्ञान स्वल्प था। ऋषि जी ने कहा, ''अपने गुरु केशवचन्द्र को बुलाकर मेरे से शास्त्रार्थ करवा लें।''

आर्यसमाज अमृतसर की सबसे प्रथम रिपोर्ट न किसी ने देखी है और न पढ़ी है। सन् १८८३ में प्रकाशित इस रिपोर्ट की एक दुर्लभ प्रति मेरे पास है। आर्यसमाज की स्थापना मियाँ जान मुहम्मद की कोठी में की गई, वहीं ऋषि के ठहरने की व्यवस्था थी। वह स्थान कुछ समय तक किराये पर आर्यों ने लिया था। पथिक जी ने वह मकान देखा तो नहीं, परन्तु ज्ञानी पिण्डीदास जी ने संकेत करके उन्हें बताया था कि वह कोठी इधर थी। यत्न किया जावे तो उस कोठी का पता चल सकता है। मैंने 'महर्षि दयानन्द सरस्वती-सम्पूर्ण जीवन चरित्र' में बड़े विस्तार से महर्षि की पंजाब यात्रा का प्रामाणिक वृत्तान्त दिया है। इस ग्रन्थ के होते कोई भी व्यक्ति भ्रान्ति नहीं फैला सकता। प्रकाश जी जैसे जागरूक आर्यों को भ्रम-भञ्जन के लिये सजग रहना चाहिये।

भारतीयता पर मैक्समूलर की कृपा-दृष्टि- मैक्समूलर का नाम जिस किसी भारतीय, विशेषरूप से किसी हिन्दू की वाणी व लेखनी से निकलता है, हीनभावना से ग्रसित वह व्यक्ति अनेक बार अपनी जिह्वा को चाटता रह जाता है। हम पहले बता चुके हैं कि अपनों का मन्दिर-प्रवेश रोकने के लिये लड़ने-मरने वाले मद्रासी ब्राह्मणों ने अपने एक बड़े मन्दिर के पाषाणदेवता से मैक्समूलर को मृत्यु से बचाने व दीर्घजीवी करने की एक विशेष प्रार्थना करवाई। भले ही मैक्समूलर फिर भी न बचा। स्वामी विवेकानन्द ने जो उसका गुणकीर्तन किया है उसे हम नहीं बता सकते। पाठक स्वामी जी के साहित्य में खोजकर पढ़ लें।

मैक्समूलर की अन्तिम पुस्तक My Indian Friends की भारत में अब सम्भवत: किसी विरले व्यक्ति को ही जानकारी हो। इसमें उसने दो भारतीयों की भावविभोर होकर चर्चा की है। एक है पादरी नीलकण्ठ शास्त्री तथा दूसरी थी पण्डिता रमाबाई। दोनों प्रकाण्ड संस्कृतज्ञ महाराष्ट्रियन ब्राह्मण थे। दोनों ने सहस्रों हिन्दुओं को ईसाई बनाया। सनातनी ब्राह्मण इन दोनों का सामना न कर सके। पं. गंगाप्रसाद सनातनी नेता ने लिखा है पादरी नीलकण्ठ श्री स्वामी दयानन्द के सामने टिक न पाया। उससे ऋषि ने ही हिन्दुओं को बचाया। Nehemiah goreh (नीलकण्ठ) को मैक्समूलर ईसाइयत का शहीद लिखता है "I have never seen so true a Christian, so true a martyr, as Nehemiah goreh." महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र अन्तिम सिख शासक को इसी ने धर्मच्युत किया। आर्यों ने इसे पंजाब से भी भगा दिया। स्वामी विवेकानन्द के हीरो (Hero) मैक्समूलर की अन्तिम पुस्तक से इतिहास की लुप्त-गुप्त सामग्री हम क्रमश: देते रहेंगे। आर्यसमाज में भी कितने ऋषि के इस उपकार और स्वर्णिम इतिहास को जानते हैं?

आर्यसमाज पर दया करो- स्वामी सम्पूर्णानन्द जी करनाल ने कुछ सप्ताह पूर्व मुझे कहा कि आर्यसमाज में कई तथाकथित रिसर्च स्कॉलर आपके साहित्य पर एक दृष्टि डालकर बिना सोचे-समझे जो जी में आता है अनाप-शनाप लिखते रहते हैं। स्वामी जी ने जो कुछ कहा सो सत्य है। नित्यप्रति भ्रामक लिखने वालों के लेखों पर देशभर के आर्य मुझ से बात करते रहते हैं। भ्रामक लिखने वालों को कौन रोक सकता है? उनका काम पक्का है। वे लोग प्रतिलिपि करवाकर अपना लेख आठ-दस निर्जीव पत्रों को प्रकाशनार्थ भेज देते हैं।

मैं तो ऐसे सज्जनों को यही कह सकता हूँ कि आर्यसमाज पर दया करो। अभी एक ने पूछा-क्या आर्यसमाज में पाँच ही प्यारे हुये हैं? हिसार के बाबू रामविचार ने सिखों के इतिहास की नकल में यह तुक गढ़ी। अब कई तुक मिलाने वाले इसके सहारे देश-विदेश में अपनी विद्वत्ता की डींग मार रहे हैं। इनके पाँच प्यारों में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने सारे देश में भ्रमण करके प्रचार किया और किसी को महाराष्ट्र से आगे जाने का सौभाग्य ही न मिला। दक्षिण में महाराज नित्यानन्द ने ऋषि मिशन को पहुँचाया। स्वामी आत्मानन्द ने फैलाया। श्याम भाई ने कारागार में प्राण दिये। नारायण स्वामी जी, पूज्य स्वतन्त्रानन्द जी, दर्शनानन्द जी, आर्य मुनि जी, पं. गंगाप्रसाद द्वय और पिंजरे में बन्दी बनाकर रखे गये पं. नरेन्द्र जी के लिये उपमा कहाँ से लाओगे? जिनके पैर में आर्यसमाज के लिये कभी काँटा भी न चुभा, कहीं विरोधियों से कभी टकराये नहीं, वे वाक्शूर आर्यसमाज के पाँच प्यारों पर फ़त्व: जारी करते हैं। यह हास्यास्पद है।

एक श्रीमान् ने लिखा है पं. लेखराम जी को फ़ारसी भाषा का सामान्य सा (मामूली) ज्ञान था। पण्डित जी फ़ारसी के कवि भी थे। फ़ारसी में गद्य-पद्य ख़ूब लिखते थे। उनके ग्रन्थ-संग्रह में फ़ारसी के मूर्धन्य कवियों के सहस्रों पद्य उद्धृत हैं जो सब उन्हें कण्ठाग्र थे। लेखक का नाम यहाँ दूँ तो सब चौंक पड़ेंगे। आर्यसमाज का दुर्भाग्य है कि इसको बिना प्रमाण के, बिना स्रोत के मुँहज़बानी इतिहास लिखने वाले कृपालु मिल गये।

एक ने पं. लेखराम जी तथा मिर्ज़ा गुलाम अहमद के सैद्धान्तिक साहित्य के दो-चार सौ पृष्ठ देखे-पढ़े बिना लिख मारा है कि कादियानी नबी ने 'वही हमारा कृष्ण' पुस्तक लिख दी। मुझे पता लगा तो मैं चकरा गया। मेरा सम्बन्ध कादियाँ से है। मुझे पता था कि मिर्ज़ा ने ऐसी कोई पुस्तक नहीं लिखी। यह भ्रामक लेख 'वेदप्रकाश' मासिक में भी छप गया। कहीं मुझे ही तो भ्रम नहीं हो रहा? मिर्ज़ा के ग्रन्थ देखे। मिर्ज़ाई साहित्य की सूचियाँ देखीं। अपयश तो समाज का हो रहा है। मिर्ज़ाई मुकदमाबाजी में दक्ष हैं। कोर्ट में घसीट ले तो पत्रों के संचालकों....। यह भी लिखा कि मिर्ज़ा स्वयं को नानक बताता था। यह तो एकदम काला झूठ है। उसने ऐसा कहीं न लिखा और न कहा। एक ने लिख दिया कि जिज्ञासु ने अमुक पुस्तक में लिखा है। मैंने कहीं भी जो उसने लिखा है- वह बात नहीं लिखी। उसने खेद तक प्रकट नहीं किया। एक ने मुसलमानों का वकील बनकर पं. लेखराम जी के मुसलमानों के बारे में एक कथन को निराधार व झूठा लिख दिया। आश्चर्य

की बात तो यह है कि मुसलमानों ने पण्डित जी के साहित्य पर सात बार अभियोग चलाये। सातों बार हारे। मुसलमानों ने एक बार भी उस कथन को नहीं झुठलाया, जिस पर एक आर्य नामधारी कृपालु ने फ़त्व: जारी किया है।

पं. मनसाराम वैदिक तोप, पं. धर्मदेव जी, उपाध्यायजी, पं. चमूपति जी और मेरे जैसे व्यक्ति की पुस्तकों की तस्करी करके बिना लेखक का नाम लिये जैसा चाहते हैं लिख देते हैं। डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी के मनुस्मृति विषयक साहित्य की चोरी तो लिखते-बोलते करते ही हैं। आर्यसमाज के विरोध में छपने वाली किसी पुस्तक व लेख का लम्बे-लम्बे लेख लिखने वाले ये लेखक कभी भी उत्तर नहीं देते। कुछ पल्ले हो तो उत्तर में कुछ लिखें भी। श्रद्धाराम फिल्लौरी विषयक एक नया ग्रन्थ छपा है। उसमें फिर ऋषि पर प्रहार किया गया है। इनमें से हर कोई मुँह में दही जमाये बैठा है। हम भी चाहते हैं कि सब स्वाध्यायशील हों। सब लेखक बनें, परन्तु जो कुछ लिखें, प्रामाणिक हो। आर्यसमाज की साख को बट्टा न लगे।

किसी को पता तक न चला- एक समय था, आर्यों की स्वाध्यायशीलता व जानकारी की ऐसी धाक थी कि सनातनधर्मी विद्वान् नेता पं. गंगाप्रसाद ने एक मुसलमान का सामना करने के लिये देहलवी जी को रक्षा के लिये पुकारा। देहलवी जी ने हिन्दुओं की नाक बचाई। मुसलमानों के दो सम्प्रदायों के विवाद को निपटाने के लिये पं. शान्तिप्रकाश जी की शरण उन्हें लेनी पड़ी। एक सनातन धर्म सभा को शास्त्रार्थ करने के लिये हमारे ठाकुर अमरसिंह जी से गुहार लगानी पड़ी।

कुछ वर्ष पूर्व सच्चिदानन्द शास्त्री जी ने सम्पादक बनकर पं. शान्तिप्रकाश वाला 'कुल्लियाते आर्य मुसाफिर' का संस्करण निकाला। उसमें पं. शान्तिप्रकाश जी का अत्यन्त खोजपूर्ण विद्वत्तापूर्ण २२ पृष्ठ का लेख दूषित और विकृत कर दिया। स्वर्ण मुद्राओं से तोलने योग्य पण्डित जी के बेजोड़ लेख में खरी बात को, शुद्ध वाक्य को सच्चिदानन्द जी ने निरर्थक व अशुद्ध बनाकर रख दिया। किसी को पता न चला। कुल्लियात पर कार्य करते हुये मुझे २६-०४-२०१८ को इतने लम्बे समय बाद पता चला। अपनों की कृपा से हम मारे गये। सच्चिदानन्द जी ने सगर्व सम्पादकीय लिखा। सम्पादन क्या किया? एक वाक्य, एक पंक्ति नहीं लिखी! यह ग्रन्थ उनकी बुद्धि की पकड़ से बहुत आगे का था।

काँग्रेस और दलित- राहुल जनेऊधारी हिन्दू ब्राह्मण बनकर कमाल कर रहा है। वह तिलकधारी भी है। सुरजेवाला लगे हाथों उसे शंकराचार्य की किसी गद्दी पर बिठा देता तो गर्म लोहे पर चोट पड़ती। राहुल लिंगायतों को, जैनों को एक-एक कर के फोड़ रहा है। सन् १९५८ में कादियाँ में नेहरू राज में वरयामचन्द दलित नगरपालिका सदस्य को बन्दी बनाकर तस्करों के Torture House (यातना सदन) में दिन-रात मार-मार कर हड्डियाँ तोड़ दी गईं। बिना F.I.R. के एक वर्ष से अधिक समय तक अभियोग चलाया गया। अमानवीय यातना की कहानी क्या सुनायें? क्या बतायें? मेरी भी भरपेट पिटाई की गई। हम बच कैसे गये? यह तो ईश्वर ही जानें। सुरजेवाला को क्या पता बेचारे वरयामचन्द दलित पर अत्याचारों के कारण तब पंजाब भर में कितना आतंक था। मेरी तो बात छोड़ो। दलित बेचारे के लिये नेहरू की आँखों से एक भी अश्रुकण न टपका। जय हो काँग्रेस के दलितवाद की, दलितों की दुहाई भी देना, बाबू जगजीवनराम को प्रधानमन्त्री न बनाकर आपातकाल घोषित करना और अब जातिवाद को खाद पानी देना-यह क्या है?

ऋषि दयानन्द ने कहा था

सत्य और असत्य क्या है?

जो-जो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों से अनुकूल हो वह-वह सत्य और उससे विरुद्ध असत्य है। जो-जो सृष्टिक्रम से अनुकूल वह-वह सत्य और जो-जो सृष्टिक्रम से विरुद्ध है वह-वह सब असत्य है, जैसे कोई कहे कि बिना माता-पिता के योग से लड़का उत्पन्न हुआ ऐसा कथन सृष्टिक्रम से विरुद्ध होने से सर्वथा असत्य है। **(स. प्र. स. ३)**

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १७ से २४ जून, २०१८

(ज्येष्ठ शुक्ल ४ से ज्येष्ठ शुक्ल ११, सम्वत् २०७५ तक)

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा- खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

९. किसी भी मादक द्रव्य, चाय–कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा।

१०. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

११. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।
उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ-मन्त्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है।

ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें, तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार — **ओममुनि**
कार्यकारी प्रधान — **मन्त्री**

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टैण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४
email:psabhaa@gmail.com

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

ऐतिहासिक कलम....

राष्ट्र-रक्षा कैसे

आचार्य उदयवीर शास्त्री

नीतिज्ञ एवं राजनीतिशास्त्रों का कहना है- **'शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्रचिन्ता प्रवर्त्तते'** अर्थात् शस्त्र द्वारा राष्ट्र की रक्षा हो जाने पर ही शास्त्र की चिन्ता में प्रवृत्त होना चाहिये। व्यक्ति के समान प्रत्येक राष्ट्र के तीन पक्ष स्वभावत: होते हैं- शत्रु, मित्र और उदासीन। मित्र- पक्ष के साथ प्रत्येक शासन परस्पर सहयोग की भावना रखता है। उदासीन पक्ष के प्रति बड़ी सावधानता व सतर्कता के साथ इस स्थिति को बनाये रखना आवश्यक होता है, इसका झुकाव शत्रु की ओर न हो जाय। शत्रु एक ऐसा पक्ष है, जहाँ प्रतिक्षण संघर्ष की भावना बनी रहती है। संघर्ष चाहे अपने रूप में अच्छा नहीं समझा जाता, क्योंकि इससे चतुरत्र हानि की संभावना अधिक रहती है, परन्तु संघर्ष आवश्यक हो जाने पर उससे बचना अथवा उसे टालने का प्रयास करना राष्ट्र के लिये और भी अधिक घातक सिद्ध होता है। इसीलिये नीतिकारों ने कहा है-शस्त्र द्वारा राष्ट्र की रक्षा करना सबसे पहला धर्म है। अरक्षित राष्ट्र में संपन्न कार्य भी विफल जैसे बने रहते हैं।

यह एक बड़ी सूक्ष्म बात है कि कोई राष्ट्र शस्त्र का प्रयोग कब करे। राष्ट्र के कर्णधार, जो राजनीति और युद्धकला में विशारद एवं अति निपुण होते हैं, वे उन परिस्थितियों को समझते हैं। पर इस समझ में यदि कहीं भ्रम रहता है, तो परिणाम उलट भी जाते हैं। यदि कोई राष्ट्र अपनी किन्हीं अज्ञात दुर्बलताओं के कारण अन्य राष्ट्र के अधीन हो चुका है, उसका भी एक समय आता है, जब राष्ट्र को अपनी उस हीन स्थिति का अनुभव होने लगता है। वह उस पराधीनता से निकलने के लिये छटपटाने लगता है। स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये और स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने पर उसकी रक्षा के लिये संघर्ष आधुनिक काल में अनुकूल-प्रतिकूल दोनों दशाओं में अच्छे नतीजे देता है। हमारे जीवन में यूरोप के अन्दर दो महान् युद्ध हो गए। वे जितनी जल्दी-जल्दी हो गये, उतनी ही जल्दी उनकी प्रतिक्रिया के स्वरूप संसार में अनेक उपलब्धियाँ सामने आईं। योरुप के ये युद्ध यदि न होते, तो एशिया और अफ्रीका के जिन बड़े-बड़े राष्ट्रों अथवा अनेक छोटे राष्ट्रों को भी जो इस पिछले थोड़े अन्तराल काल में स्वतन्त्रता मिली है, वह कदाचित् लम्बे समय तक भी न मिल पाती।

पिछली दो शताब्दियों में, एशिया-अफ्रीका को यूरोप की विदेशी शक्तियों ने पराधीन बनाया और उन्होंने अपने आपको अजेय स्थिति में पाया। पर समय ने उनके इस गर्व को झकझोरा और उनके पारस्परिक संघर्ष ने उनको शिथिल बनाया, जिसके परिणामस्वरूप पराधीन राष्ट्र स्वतन्त्रता प्राप्त करने में समर्थ हो सके। हमारा राष्ट्र भी इसी परिस्थिति से निकला है। इसके सन्मुख अपनी नव-प्राप्त स्वतन्त्रता की रक्षा करना एक बड़ी समस्या है।

यूरोप की उन शक्तियों में, जिन्होंने एशिया-अफ्रीका में अपने साम्राज्य बनाए, ब्रिटिश जाति अत्यन्त दूरपरिणामदर्शी और कूटनीतिक प्रयोगों में मूर्द्धन्य है। इस देश में आने से पूर्व उसने अमेरिका और आस्ट्रेलिया में अपने उपनिवेश कायम किए। अमेरिका में यद्यपि यूरोप की प्राय: सब जातियां हैं, पर ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड में विशुद्ध ब्रिटिश जाति के उपनिवेश हैं। अपनी एकच्छत्र स्थिति को निर्बाध बनाने के लिए वहाँ बसी पुरानी जातियों को नष्ट कर दिया गया है। इस देश में भी कदाचित् इसी भावना के साथ यूरोप की शक्तियों ने प्रवेश किया और धीरे-धीरे अपना पैर जमाया, पर अधिक भारत पर ब्रिटिश जाति का आधिपत्य रहा। आखिर अब से बीस वर्ष पूर्व **(यह लेख १९६७ में लिखा गया था)** उसे यह देश छोड़ना पड़ा। यद्यपि उस समय के और उसके पीछे के नामों से यह प्रतीत होता है कि कदाचित् उसके दिल से इसका दर्द, इसकी कसक अभी निकल नहीं सकी है। इस राष्ट्र की स्वतन्त्रता मानो उसे कटोचती रहती हो। जब विदेशी शासक इस देश के शासन को छोड़कर यहाँ से जाने लगे, तब प्रतीत होता है, कदाचित् उनकी यह भावना नहीं रही कि यह राष्ट्र स्वतन्त्रता के साथ फले-फूले। पिछली एक शताब्दी में १८५७ के स्वतनत्रता संघर्ष के अनन्तर राष्ट्रशक्तियों में शिथिलता आ जाने पर विदेशी शासकों ने ''फूट डालो और हुकूमत करो'' के सिद्धान्त को अच्छी तरह समझा, तथा पूरी ताकत एवं चतुराई के साथ उसका प्रयोग किया। यह सब कुछ होने पर भी राष्ट्र के अन्दर स्वतन्त्रता की भावना सर्वथा नष्ट नहीं की जा

सकी। अवसर पाकर उसने सिर उठाया और इतनी शक्ति के साथ उठाया कि फिर उसको झुकाने में तात्कालिक शासन ने अपने आपको अशक्त समझा। तब अपनी खीझ को मिटाने के लिए कुछ मोहरे खड़े किए गए, उनको बड़े यत्न से छाँटकर ठोक-पीट कर तैयार किया गया, राष्ट्र के सामने लाकर जमा दिया गया, जिसका नतीजा निकला-पाकिस्तान। कहा गया हिन्दू-मुस्लिम एक साथ नहीं रह सकते। जबकि आज भी लगभग पाँच-छ: करोड़ मुस्लिम भाई भारत में रह रहे हैं। उनकी अन्तरात्मा की बात मैं कह सकता कि वे किन स्थितियों में यहाँ हैं, वे अनुकूल या प्रतिकूल कैसा अनुभव करते हैं, यह भी उनकी अन्तरात्मा समझती होगी कि उनकी मनोवृत्तियाँ भारत व पाकिस्तान को लेकर किस दिशा में बह रही हैं, पर यह निश्चय है कि पाकिस्तान के वर्तमान नेताओं द्वारा उद्घोषित इतने महान् कष्टों के बीच में रहते हुए भी पिछले अठारह वर्ष में इनकी संख्या बढ़कर लगभग दुगनी हो गई है। क्या यह उनके कष्टों का परिणाम है, या सुख-सुविधा का? इसके विपरीत पाकिस्तान में गैरमुस्लिमों की संख्या उतने ही काल में आधी रह गई है। इसके अतिरिक्त लाखों की संख्या में उन लोगों में से मुस्लिम भाई इधर फिर वापस आ गए हैं, जो हिजरत कर पाकिस्तानी भाग में चले गए थे और वहाँ उन्होंने जो **'सुख-सुविधा'** प्राप्त की, उसको याद कर अब उधर जाने का नाम भी नहीं लेना चाहते।

प्रश्न यह है कि यह सब किसका परिणाम है? राजनीतिज्ञ इसको किसी रूप में समझें, पर एक विचारक की दृष्टि में यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि ये सब स्थितियाँ उन मनोवृत्तियों का परिणाम हैं, जिनको लगभग बीस वर्ष से पहले के काल में तात्कालिक विदेशी शासकों ने मुस्लिम नेताओं के दिमाग में जमाया और पनपाया। भारत के निवासी मुसलमान अपने मादरे-वतन के लिये क्या कुरबानियाँ कर सकते हैं यह हाल के (१९६७ के अनुसार) भारत-पाक संघर्ष ने स्पष्ट कर दिया है, उसके लिए अब और किसी सबूत की जरूरत नहीं है। भारत राष्ट्र की स्वतन्त्रता का लम्बा इतिहास है। अनेक आक्रान्ता आये, चले गये, कुछ यहीं के बनकर रह गये, उनके लिये अब अपना यही राष्ट्र है, यही वतन, यही मातृभूमि। कुछ वर्ग अपने देशों में प्रताड़ित होकर आश्रय मिल जाने की भावना से भी आये, वह उनको उदारता के साथ मिला। इनमें मुख्य रूप से शताब्दियों पहले भारत में बसी पारसी जाति का अब यही देश है, तिब्बत निवासियों के विषय में भविष्य बतायेगा, अभी कोई ऐसे आसार नहीं दिखाई देते, जिनसे अपने देश में उनके वापस हो जाने की संभावना हो। भारत-निवासी मुस्लिम भाइयों के विषय में तो कुछ कहना ही नहीं, देश-विभाजन के बाद बीस वर्ष का काल इसका साक्षी है, पर भारत में पाकिस्तान की जनता के प्रति भी एकता की भावना अभी पर्याप्त मात्रा में बनी है। देश के दोनों भागों का बुद्धिजीवी वर्ग इस तथ्य को समझता है। इस सब के बावजूद पाक नेताओं की मनोवृत्ति जब तक पश्चिमी राष्ट्रों की गुलाम रहेगी, यह संघर्ष समाप्त होने की संभावना नहीं। पिछले साधारण संघर्ष में जब अठारह साल का पट्ठा पिटता देखा, तब स्वयं पाक इतना नहीं, जितना पश्चिम बौखलाया। ऐसी स्थिति में राष्ट्ररक्षा के लिये प्रतिक्षण सतर्क रहना कितना आवश्यक है, यह प्रत्येक भारतीय की दृष्टि से ओझल नहीं होना चाहिये।

राष्ट्र-रक्षा के इतिहास पर दृष्टि डाली जाय, तो यह साफ़ नज़र आयगा कि चीन के विरोध के पीछे भी पुराने मदारी के हाथ की डोर का होना संभव है, इतिहास इसे बतायेगा। पूर्व के दो महान् राष्ट्र मिल कर चल सकते हैं। यह एक आशंकित शक पश्चिम की छाती में चुभन पैदा करने के लिये पर्याप्त था, यह भावना पूरब में चिंनगारी लगाने के लिये साधन बनी। भारत की स्वतन्त्रता के बाद भारत की वास्तविक आन्तरिक स्थिति से ब्रिटेन जितना परिचित था, अन्य किसी की उतनी जानकारी संभव न थी। फिर अनायास आता हुआ माल किसको बुरा लगता है? तात्कालिक भारतीय नेताओं के विषय में कुछ न कहना ही ठीक है। चीन ने इसी परिप्रेक्ष्य में भारत की ओर कदम बढ़ाया। अब परिस्थितियाँ सर्वथा भिन्न हैं। हमें यह समझना चाहिये कि हमारे विरोध की जड़ कहाँ है। जब तक यथार्थ निदानपूर्वक उसका उपचार न होगा, राष्ट्र-रक्षा के लिये कठिनाइयाँ बनी रहेंगी। प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का अंग है, राष्ट्र ही राष्ट्र की रक्षा कर सकता है। ऐसे ही एक अवसर पर कवि भारवि के शब्दों में अर्जुन को लक्ष्य कर पाण्डवों के सन्मुख वेदव्यास ने कहा था-

लभ्या धरित्री तव विक्रमेण,
ज्यायाँश्च वीर्यास्त्रबलैर्विपक्षः।
अतः प्रकर्षाय विधिर्विधेयः,
प्रकर्षतन्त्रा हि रणे जयश्रीः।।

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. वेदपथ के पथिक (आचार्य धर्मवीर स्मृति ग्रन्थ)

पृष्ठ संख्या-२६४

मूल्य-रु. २००/-(आधे मूल्य पर उपलब्ध)

परोपकारिणी सभा के यशस्वी प्रधान डॉ. धर्मवीर जी का जीवन सत्य के लिये संघर्षपूर्ण रहा है। विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने ईश्वर, वेद और धर्म को अपने जीवन से तनिक भी अलग नहीं होने दिया और यही विशेषता रही, जिसके कारण वे एक आदर्श आचार्य, आदर्श नेता, आदर्श लेखक, आदर्श सम्पादक एवं आदर्श उपदेशक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उनके जीवन की कही-अनकही घटनाएँ हमें भी प्रेरणा दें, इस दृष्टि से ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय है। जिन्होंने डॉ. धर्मवीर जी को निकट से देखा है, जो उनके जीवन की घटनाओं के साक्षी रहे हैं, उनके संस्मरण इस कर्मयोगी के जीवन की बारीकियों को उजागर करते हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में चित्रों के माध्यम से भी उनके जीवन की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है।

२. महर्षि दयानन्द सरस्वती के कुछ हस्तलिखित पत्र-

पृष्ठ संख्या-३३६ **मूल्य**-रु. २००/-

महर्षि दयानन्द, उनके उद्देश्यों, कार्यों, योजनाओं एवं व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा लिखे पत्र उतने ही उपयोगी हैं, जितना कि उनका जीवन-चरित्र। ये पत्र महर्षि के हस्तलिखित हैं। पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें मूल-पत्रों की प्रतिलिपि दी गई है और साथ ही वह पत्र टाइप करके भी दिया गया है। यह पुस्तक विद्वानों के दीर्घकालीन पुरुषार्थ का फल है। जनसामान्य इससे लाभ ले-यही आशा है।

३. अंग्रेज जीत रहा है-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-२२२ **मूल्य**-रु. १५०/-

इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के 'भाषा और शिक्षा' विषय पर लिखे गये ४२ सम्पादकीयों का संकलन किया गया है। 'परोपकारी' पत्रिका में लिखे गये इन सम्पादकीयों को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की माँग समय-समय पर उठती रही है। अत: पुस्तक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। डॉ. धर्मवीर जी का चिन्तन बेजोड़ था। वे जिस विषय पर जो भी लिखते वह अद्वितीय हो जाता था। उनके अन्य सम्पादकीयों का प्रकाशन भी प्रक्रिया में है। पुस्तक का आवरण व साज-सज्जा अत्याकर्षक है।

४. स्तुता मया वरदा वेदमाता-

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१३५ **मूल्य**-रु. १००/-

वेद ईश्वर प्रदत्त आचार संहिता है। वेद की आज्ञा ईश्वर की आज्ञा है और वही धर्म है, इसलिये मानव मात्र की समस्त समस्याओं का समाधान वेद में होना ही चाहिये। वेद के कुछ ऐसे ही सूक्तों की सरल सुबोध व्याख्या ही इस पुस्तक में की गई है। पुस्तक की भाषा इतनी सरल है कि नये-से नये पाठक को भी सहज ही आकर्षित कर लेती है। व्याख्याता लेखक आचार्य डॉ. धर्मवीर जी के गहन आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक चिन्तन व अनुभवों के परिणामरूप यह पुस्तक है।

५. इतिहास बोल पड़ा-

लेखक - प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु

पृष्ठ संख्या-१५९ **मूल्य**-रु. १००/-

इस पुस्तक में इतिहास की परतों से कुछ दुर्लभ तथ्य निकालकर दिये गये हैं, जो कि आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती के गौरव का बखान करते हैं। पुस्तक के लेखक प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु हैं। ऋषि के समय में देश-विदेश से छपने वाले पत्र-पत्रिकाओं के उद्धरण इस पुस्तक में दिये गये हैं।

६. बेताल फिर डाल पर

लेखक - प्रो. धर्मवीर

पृष्ठ संख्या-१०४ **मूल्य**-रु. ६०/-

डॉ. धर्मवीर जी की हॉलैण्ड एवं अमेरिका यात्रा का विवरण एवं अनुभव इस पुस्तक में है। विदेश में आर्यसमाज की स्थिति, कार्यशैली, वहाँ की परिस्थितियाँ एवं विशेषताओं को यह पुस्तक उजागर करती है। यायावर प्रवृत्ति के विद्वान् आचार्य धर्मवीर जी की यह पुस्तक एक प्रचारक के जीवन पर भी प्रकाश डालती है।

७. लोकोत्तर धर्मवीर-

लेखक - तपेन्द्र वेदालंकार,

पृष्ठ संख्या-४४ **मूल्य**-रु. २०/-

तपेन्द्र वेदालंकार (सेवानिवृत्त आई.ए.एस.) ने इस पुस्तक में डॉ. धर्मवीर जी के जीवन की कुछ ऐसी घटनाओं पर प्रकाश डाला है, जिनसे धर्मवीर जी के महान् लक्ष्यों व तदनुरूप कार्यशैली का पता चलता है। इस लघु पुस्तक से प्रेरणा लेकर प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के उद्देश्यों को पूर्ण करने में उत्साहित हो-यही आशा है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

गृही भूत्वा वनी भवेत्

तपेन्द्र वेदालंकार आई.ए.एस. (से. नि.)

भावी पीढ़ी को योग्य व विद्वान् बनाने का मुख्य दायित्व गृहस्थ आश्रम पर है। गृहस्थ को ब्रह्मचर्य आश्रम के लिए अच्छी सन्तति का भी निर्माण करना होता है तथा स्वयं को भी वानप्रस्थ के लिए तैयार करना होता है। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ व संन्यास ये सभी आश्रम गृहस्थ आश्रम के आश्रित हैं। महर्षि दयानन्द जी महाराज निम्न श्लोक को उद्धृत करते हैं-

यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।।

मनु.

''जैसे नदी और बड़े-बड़े नद तब तक भ्रमते ही रहते हैं, जब तक समुद्र को प्राप्त नहीं होते, वैसे गृहस्थ ही के आश्रय से सब आश्रम स्थिर रहते हैं, बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।''

प्रथम आश्रम में विद्या, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि का अर्जन किया जाता है, वहाँ आश्रमी स्वकेन्द्रित होता है, केवल अपना सोचता है, परन्तु गृहस्थ में उसके एकाकी चिन्तन-स्वयं-हितार्थ चिन्तन का दायरा बढ़ जाता है, वह स्वकेन्द्रित चिन्तन के सिवाय अपनी पत्नी, अपनी सन्तान, अपने परिवार को अपने से अधिक समझता है, अपने से अधिक उन्हें प्रेम करता है, कष्ट उठाकर भी उन्हें सुखी देखना चाहता है। गृहस्थ पत्नी की, सन्तान की, परिवार की, दूसरों की, अन्य सामाजिक लोगों की चिन्ता करता है, उनके लिए त्याग करता है, गृहस्थ में त्याग का उच्चपाठ सीखता-पढ़ता है।

शैक्षिक योग्यता हो या आर्थिक सम्पन्नता-कोई माता-पिता अपनी सन्तान को अपने से कम नहीं देखना चाहता। नैतिक योग्यता भी इसमें जोड़नी होगी। सन्तान यदि संस्कारवान् होगी तो आगे आने वाला समाज संस्कारित होगा, फलतः सुखी होगा। भावी पीढ़ी शारीरिक, मानसिक व आत्मिक गुणों में माता-पिता से आगे बढ़ी होनी चाहिये- यह गृहस्थ का प्रथम कर्त्तव्य है।

गृहस्थ धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष, पुरुषार्थ चतुष्टय के अन्तिम पुरुषार्थ, मोक्ष की ओर अग्रसर होने का भी आश्रम है। धर्मपूर्वक अर्थ का संचय किया जावे, तो मोक्ष का रास्ता सुगम हो जावेगा। गृहस्थ आश्रम भोग-विलास का आश्रम नहीं अपितु भोगों को भोगते हुए उनकी निःसारता को जानकर, समझकर वैराग्य की भावना को बलवती कर वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करने की तैयारी करना है। महर्षि दयानन्द जी महाराज शतपथ ब्राह्मण का उद्धरण देते हैं-

ब्रह्मचर्य्याश्रमं समाप्य गृही भवेत् गृही भूत्वा वनी
भवेत् वनी भूत्वा प्रव्रजेत्।

मनुष्यों को उचित है कि ब्रह्मचर्य समाप्त करके गृहस्थ, गृहस्थ होकर वानप्रस्थ और वानप्रस्थ होकर संन्यासी होवें।

भावी पीढ़ी के उत्तम निर्माण तथा वानप्रस्थ की ओर प्रस्थान के लिए हमारे ऋषियों ने गृहस्थ के लिए दैनिक कर्त्तव्यों का विधान किया है, जिन्हें यज्ञ कहते हैं।

प्रथम ब्रह्मयज्ञ अर्थात् शास्त्रों का पढ़ना, योगाभ्यास, सन्ध्या-ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना। गृहस्थ में पर्याप्त उतार-चढ़ाव देखने पड़ते हैं। अतः सम अवस्था रखने के लिए, सुख दुःखों में स्थिरता बनाये रखने के लिए प्रतिदिन परमपिता परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करना आवश्यक है। शास्त्रों के पढ़ने का विधान इसलिए कि यदि एक पृष्ठ भी प्रतिदिन पढ़ा जावे तो विचारों की दृढ़ता बनी रहेगी, सिद्धान्तों पर विश्वास डिगेगा नहीं। स्तुति इसलिए कि अच्छे गुणों को अपनाने के प्रति प्रीति बढ़ेगी, प्रार्थना इसलिए कि ईश्वर का सहाय्य प्राप्त होगा, उपासना इसलिए कि आत्मिक शान्ति मिलेगी। महर्षि सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं, **''स्तुति से ईश्वर में प्रीति, उसके गुण-कर्म-स्वभाव से अपने गुण-कर्म-स्वभाव का सुधरना, प्रार्थना से निरभिमानता, उत्साह और सहाय्य का मिलना, उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होना।''**

दूसरा यज्ञ है देवयज्ञ अर्थात् अग्निहोत्र। महर्षि सत्यार्थप्रकाश में लिखते हैं, ''जब तक इस होम का प्रचार

रहा, तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित व सुखों से पूरित था।'' महर्षि लिखते हैं, ''सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धयुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु और जल से आरोग्य और रोग नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है।'' अग्नि में यह गुण है कि वह दुर्गन्धित वायु को घर से बाहर निकालकर स्वच्छ वायु का प्रवेश करा सकता है, अन्य धूप आदि नहीं। आज समाज में यज्ञ का चलन कम हो गया, फलतः बीमारियों ने गृहस्थ को आ घेरा है। गृहस्थ का समय व धन बीमारियों में लग रहा है जिसे परिवार के, देश के विकास में लगना चाहिये। अनुभव से कहा जा सकता है कि जिस घर में प्रतिदिन यज्ञ होता है, उस घर से बीमारियाँ दूर रहती हैं। मौसमी बीमारियाँ बुखार, मलेरिया, फ्लू, डेंगू आदि उस घर में तो होती ही नहीं, आस-पास के घरों में भी नहीं होती। यदि होती भी हैं तो प्रभाव नगण्य होता है। यदि यज्ञ के अन्य लाभों को नकार भी दिया जावे तथा आज के भौतिक युग में आर्थिक लाभ को ही ध्यान में रखा जावे तो भी यज्ञ करने वाला गृहस्थ अपने घर के वायु को स्वच्छ रखकर अपने परिवार को रोगरहित रख सकता है तथा रोगों के इलाज पर व्यय होने वाले धन व समय की बचत कर सकता है।

यदि हम अपने माता-पिता आदि की सेवा करेंगे तो उनके जीवन का अनुभव हमें प्राप्त होगा तथा उनका आशीर्वाद भी मिलेगा। यदि हम उनके अनुभव का लाभ नहीं उठायेंगे और अंगुली आग में जलाकर ही अनुभव करना चाहेंगे कि आग जलाती है-तो यह समझदारी नहीं होगी और फिर हम अपने माता-पिता से जो व्यवहार करेंगे, उसी व्यवहार को हमारे बच्चे बुढ़ापे में हमारे साथ दोहरायेंगे-इसे कोई बदल नहीं सकता, क्योंकि बच्चे व्यवहार से सीखते हैं तथा व्यवहार की शिक्षा का गहरा व दीर्घकालीन असर होता है। अतः श्रद्धापूर्वक अपने माता-पिता की सेवा करना व उनकी सुख-सुविधा का सामर्थ्य अनुसार ध्यान रखना गृहस्थ को सुखी बनाने तथा भावी पीढ़ी को संस्कारित करने का सरल उपाय है। **यही पितृयज्ञ है**।

माता-पिता अपने बच्चों से ज्यादा कुछ नहीं चाहते, वे तो अपने बच्चों के लिए समर्पण सीख चुके हैं, सब कुछ समर्पित कर चुके हैं। उन्हें सम्मान नहीं दे सकते तो ना दें, परन्तु उन्हें उपेक्षा न दें, वह उन्हें कचोटती रहेगी तथा प्रसन्न नहीं रहने देगी। सुविधा कम हो, उन्हें मलाल नहीं होगा, लेकिन उपेक्षा से तो उन्हें दुःख होगा। वैसे भी जिन माता-पिता ने अनेकों कष्ट सहकर हमें पाल-पोस कर बड़ा किया, उनके प्रति श्रद्धा व सेवा-भावना न रखना कृतघ्नता है तथा कृतघ्नता सबसे बड़ा पाप है। वाल्मीकि रामायण में कहा गया है-

गोघ्ने चैव सुरापे च, चौरे भग्नव्रते तथा।
निष्कृतिर्विहिता सद्भिः कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः।।

गो-हत्यारे, शराबी, चोर और व्रतभंग करने वाले का प्रायश्चित् शास्त्रों में बताया है, परन्तु उपकार को न मानने वाले कृतघ्न का कोई **प्रायश्चित्** नहीं है।

योगदर्शन में मन को प्रसन्न रखने के साधनों में एक साधन करुणा भी बताया गया है। तर्क को अधिक मानने वाले कुछ व्यक्ति कई बार ऐसा सोच लेते हैं कि सामने वाले दुःखी व्यक्ति का दुःख उसके कर्मों का फल है तथा दुःख से उदासीन हो जाते हैं। यह बिल्कुल भी उचित नहीं, क्योंकि यह सिद्धान्तों के अनुकूल नहीं, यह धर्म नहीं है। जो असमर्थ हैं, दुःखी हैं, उनके पालन का भार भी गृहस्थ आश्रम पर ही है। केवल अकेले खाने वाले को '**केवलाघो भवति केवलादी**' कहकर 'पाप खाने वाला' कहा गया है।

जो खाकर ही अकेले यूं सदा गुजरान करते हैं,
यूँ भरने को तो दुनियाँ में पशु भी पेट भरते हैं,
'पथिक' जो बाँटकर खाये उसे इन्सान कहते हैं।
पराया दर्द अपनाये उसे इन्सान कहते हैं।।

यदि इन्सान में इंसानियत आयेगी तो वह उदात्त होगा, पूज्य होगा, यशस्वी होगा, स्मरणीय होगा। भोज-प्रबन्ध में आया है-

सङ्ग्रहैकपरः प्रायः समुद्रोऽपि रसातले।
दातारं जलदं पश्य गर्जन्तं भुवनोपरि।।

संग्रह में लगा हुआ समुद्र सदा रसातल में पड़ा रहता है, जबकि सबको जल देने वाला बादल संसार के ऊपर गरजता है। वैसे भी हम कृषि-कर्म करते हैं, व्यापार करते हैं, फैक्ट्री चलाते हैं, भोजन बनाते हैं, यहाँ तक कि चलते हैं, तब भी कुछ न कुछ हिंसा जाने अनजाने होती है-

उसके लिए उतना उपकार तो करना ही चाहिये।

महर्षि सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में दान के पात्र व कुपात्र को बतलाते हुए लिखते हैं, "...परन्तु दुर्भिक्षादि आपत्काल में अन्न, जल, वस्त्र और औषध, पथ्य, स्थान के अधिकारी सब प्राणिमात्र होते हैं।"

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निवपेद भुविः।।

"कुत्तों, कंगालों, कुष्ठी आदि रोगियों, काक आदि पक्षियों और चींटी आदि कृमियों के लिए भी छः भाग अलग-अलग बाँट के दे देना और उनकी प्रसन्नता करना। अर्थात् सब प्राणियों को मनुष्यों से सुख होना चाहिये।"

कोटा कलेक्टर रहते हुए सरकारी कोठी में केले के पेड़ काफी थे, उन पर केले लदे पड़े थे। बन्दर आया, आराम से बैठकर खाने लगा। किसी कर्मचारी ने भगाना चाहा तो श्रीमती कुसुम जी बोलीं, "इनके कौन सी खेती हो रही है, इन्हें अपना पेट भरना है, खाने दो, हम तो बाजार से भी ला सकते हैं।" मेरे दादाजी जब भोजन करते थे तो पहले एक-एक टुकड़ा वहाँ सामने देहली के पास बैठे कुत्तों को देते थे। कोई कुत्ता नहीं आया तो उसकी रोटी अलग रख लेते थे। कहते थे बिना झोली के भिखारी हैं। बचपन की याद करता हूँ तो ग्राम के सभी बुजुर्ग ऐसा ही करते थे। मेरे पिता श्री रघुवरसिंह जी व महाशय फूलसिंह जी मिलकर साल में एक-दो बार खूब रोटियाँ बनवाकर गाँव भर के कुत्तों को खिलाते थे। कहते थे एक दिन तो भरपेट खाना मिलना चाहिये।

चाहे अन्य प्राणियों से गृहस्थ का सांसारिक सुख सम्पादन नहीं भी हो रहा हो, तो भी प्राणिमात्र के प्रति सुख की भावना करना-रखना, यह गृहस्थ का कर्त्तव्य है, यही **बलिवैश्वदेव यज्ञ** का सार है। अतः प्रतिदिन अपनी सामर्थ्य अनुसार, चाहे चिड़ियों को मुट्ठीभर दाना डालना हो, चाहे गर्मी में पक्षियों हेतु जलपात्र ही रखना हो-गृहस्थ को अन्य प्राणियों का सहाय्य करना चाहिये। जो बिल्कुल ही नहीं कर सकते, उन्हें सहाय्य करने की भावना रखनी चाहिये।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में लिखते हैं, "जो मनुष्य पूर्ण विद्वान्, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धर्मात्मा, सत्यवादी, छल-कपट रहित और नित्य भ्रमण करके विद्या का प्रचार और अविद्या-अधर्म की निवृत्ति सदा करते रहते हैं उनको 'अतिथि' कहते हैं।" अतिथियों की यथोचित् सेवा करना गृहस्थ का कर्त्तव्य है। जिस घर में अतिथियों का आगमन नहीं होता, वह घर उन्नति नहीं कर सकता। महर्षि 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखते हैं, "जब तक उत्तम अतिथि जगत् में नहीं होते, तब तक उन्नति भी नहीं होती।...बिना अतिथियों के सन्देह-निवृत्ति नहीं होती। इसके छूटे बिना दृढ़ निश्चय भी नहीं होता, निश्चय के बिना सुख कहाँ।" अथर्ववेद में **तद् व्रतम्** कहकर अतिथि सेवा को एक व्रत-अनिवार्य शुभ कर्म बताया है।

इष्टं च वा एष पूर्त्तं च...।। पयश्च वा एष रसं च...।।
ऊर्जां च वा एष स्फातिं च...।। प्रजां च वा एष पशूँश्च...।।
कीर्तिं च वा एष यशश्च...।। श्रियं च वा एष संविदं च...।।
गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति।।

अथर्ववेद ९.६.१-९

जो मनुष्य अतिथि को भोजन कराने से पूर्व स्वयं भोजन करता है, वह मानो अपने घर के इष्ट और पूर्त्त को, दूध और रस को, बल, पराक्रम और वृद्धि को, प्रजा और पशुओं को, प्रसिद्धि और यश को तथा लक्ष्मी व प्रतिष्ठा को खा जाता है-समाप्त कर देता है।[१] मनुस्मृति में कहा गया है कि कदाचित् भोजनादि घर में न हो तो आसन, स्थान, जल और सत्य मधुरवाणी-ये चार वस्तुएं तो सज्जनों के घर में रहती ही हैं। हम जो उपदेश अपनी सन्तान को देते हैं, अतिथि के उपदेश का उससे कहीं ज्यादा प्रभाव पड़ता है। आचार्य धर्मवीर जी हमारे घर आये थे, दोनों बेटे छोटे-छोटे थे, उन्होंने निम्न श्लोक बच्चों को स्मरण करा दिया था, जिसका प्रभाव आज भी उन पर दिखायी पड़ रहा है।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्त आयुर्विद्यायशोबलम्।।

दुनियादारी की मारामारी में समय का अभाव आज गृहस्थियों को अनुभव हो रहा है, परन्तु घण्टों तक टी.वी., पिक्चर आदि में भी तो अपना समय व संस्कार खराब कर ही रहे हैं। अतः अनिवार्य कार्यों के लिए समय विभाजन में स्थान होना ही चाहिये और **अतिथि यज्ञ** भी अनिवार्य एवं हितकारी कार्य है।

ब्रह्मयज्ञ से विद्या, शिक्षा, धर्म और सभ्यता की वृद्धि होती है। अग्निहोत्र (देवयज्ञ) से वायु, वृष्टि, जल की शुद्धि, आरोग्य व बुद्धिबल, पराक्रम बढ़ता है। पितृयज्ञ से ज्ञान-वृद्धि, सत्यासत्य का निर्णय, असत्य का त्याग और कृतज्ञता बढ़ती है। बलिवैश्वदेव यज्ञ से प्रत्युपकार, दान, करुणा के भाव बढ़ते हैं। अतिथियज्ञ से सन्देहों की निवृत्ति होती है।

गृहस्थ को इसी आश्रम को सब कुछ मानकर इसी में फंसे नहीं रहना है अपितु यह आश्रम एक पड़ाव है यात्रा का- यह समझते हुए इन्द्रिय भोग की दु:खमयता का अनुभव करते हुए वैराग्य की ओर बढ़ना है, परम सुख-मुक्ति की ओर देखना है।

धर्मं शनैः सञ्चिनुयाद् बल्मीकामिव पुत्तिकाः।
परलोकसहाय्यार्थं सर्वलोकान्यपीडयन्।। -मनु.

मनु महाराज के अनुसार धर्म का सञ्चय अन्यों का पीड़न न करते हुए धीरे-धीरे करना है। क्योंकि उस लोक में माता-पिता, भाई-बन्धु, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री कोई साथ नहीं जाता, बस केवल एक धर्म ही साथ जाता है। **तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा** का अनुकरण करते हुए उस परमपिता परमात्मा के दिये हुए पदार्थों का त्याग-भाव से उपभोग करना है। महर्षि के अनुसार गृहस्थ में चक्रवर्तीराज्यपर्यन्त प्राप्ति करनी है, परन्तु त्यक्त भावना से, उसमें लिप्त नहीं हो जाना, उससे चिपट कर नहीं रह जाना। नहीं तो जब ये सुख-सुविधाएं छोड़नी पड़ेंगी, तब अपार दु:ख होगा। मजबूरीवश दुनिया नहीं छूट सकती, अपनी मर्जी से दुनियादारी छोड़ना ही छोड़ना है, नहीं तो कपड़े रंगने या बदलने का कोई लाभ नहीं है। डॉ. सत्यव्रत जी सिद्धान्तालङ्कार ने वैदिक संस्कृति के बारे में लिखा है, "भोग ठीक है, परन्तु भोग का अन्त त्याग में है, प्रवृत्ति ठीक है, परन्तु प्रवृत्ति का अन्त निवृत्ति में है, वर्तमान ठीक है, परन्तु वर्तमान का प्रारम्भ भूत और अन्त भविष्यत् में है, भोग व प्रवृत्ति इसलिए करें ताकि त्याग और निवृत्ति की भावना पक्की हो जाय।" गृहस्थी को अपने सभी कार्यों को करते समय त्याग व निवृत्ति की यह दृष्टि अपने समक्ष रखनी चाहिये। इससे एक लाभ तो यह होगा कि भोगों का सुख, आनन्द लेते हुए भी व्यक्ति उनमें फंसेगा नहीं। दु:ख-सुख तो शरीर के साथ हैं, वे तो आवेंगे ही परन्तु उन्हें सहन करने की शक्ति आवेगी, सुख में अहंकार न होगा, दु:ख में विमूढ़ता न होगी। दूसरा लाभ यह होगा कि अपने परिवार को अपना मानते-मानते गृहस्थी समस्त परिवारों को, समाज को अपना मानने का अभ्यास भी कर लेगा व खुशी-खुशी वानप्रस्थ की ओर अग्रसर हो जावेगा।

टिप्पणी

१. सत्यानन्दजी वेदवागीश

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रात: एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नि:शुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का नि:शुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा नि:शुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ नि:शुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में नि:शुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अत: आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१ से १५ मई २०१८ तक)

१. रामरति देवी, गुरुग्राम २. कौशलेन्द्रसिंह व श्रीमती प्रेमलता, ऋषि उद्यान, अजमेर ३. श्री उपेन्द्रनाथ तलवार, नई दिल्ली ४. श्री अवनीश कपूर, दिल्ली ५. श्री लक्ष्मण प्रसाद त्रिवेदी, जूनागढ़ ६. श्री अन्शु आदर्श, दिल्ली ७. श्रीमती वीणा त्यागी, नई दिल्ली ८. श्री सुन्दरलाल सोमानी, अजमेर ९. डॉ. रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर ११. श्री विनय कुमार झा व श्रीमती सुनीता झा, जयपुर १२. श्री हर्षवर्धन आर्य, अजमेर १३. डॉ. प्रवीण माथुर, अजमेर १४. श्री गौरव मिश्रा, अजमेर १५. मै. स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती १६. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैण्ट १७. श्रीमती निशि गुप्ता, अम्बाल कैण्ट।

परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१ से १५ मई २०१८ तक)

१. श्री सतीश तनेजा, पंचकुला २. श्री सत्यदेव व्यास, नागौर ३. श्री यशपाल (साबुन वाले), दिल्ली ४. श्री उपेन्द्रनाथ तलवार, नई दिल्ली ५. श्रीमती मृदुला जोशी, अजमेर ६. श्री जगदीश प्रसाद नागर, कोटा ७. श्री उगमाराम थोरी, झालरा ८. डॉ. रमेशमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ९. डॉ. नन्दकिशोर काबरा, ऋषि उद्यान, अजमेर १०. डॉ. संजना शर्मा, अजमेर ११. श्री नारायणराम वर्मा, नागौर १२. कै. चन्द्रप्रकाश त्यागी व श्रीमती कमलेश त्यागी, रुड़की, हरिद्वार १३. श्री हरसहाय आर्य (गंगवार), बरेली १४. श्रीमती सुयशा भास्कर, अमेरिका।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २३ से ३० मई, २०१८ - **आर्यवीर दल शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

२. ०५ से १२ जून, २०१८ - **आर्य वीराङ्गना शिविर,** सम्पर्क- ०९४६००१६५९०

३. १७ से २४ जून, २०१८- **योग-साधना शिविर,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

४. १६, १७, १८ नवम्बर २०१८- **ऋषि मेला,** सम्पर्क- ०१४५-२४६०१६४

मानवता को नष्ट करता, जातिवाद

प्रकाश आर्य

जाति, सम्प्रदायों में बाँटकर,
कर रहे मानवता का अपमान।
उसके बेटे-बेटियों पर ये जुल्म,
करेगा क्षमा नहीं भगवान्।।

परमात्मा ने इस संसार का व प्राणियों की आवश्यकता की चल-अचल वस्तुओं का निर्माण किया। उसने सूर्य, चन्द्रमा, मेघ से गिरता पानी, नदी, तालाब, समुद्र, यह पृथ्वी, वृक्ष, औषधि व पशु आदि समस्त प्राणी मात्र के लिए दिए। उसने मनुष्य-मनुष्य में कोई भेद नहीं किया, क्योंकि हम सब परमात्मा के ही पुत्र-पुत्री हैं, हममें कोई भेद नहीं। ये जाति भेद अज्ञानतावश मनुष्यों की देन है। परमात्मा ने किसी को ऊँचा-नीचा, अछूत या दलित नहीं बनाया, यह सब तो मनुष्य की सोच के कारण है। जब मनुष्य की बुद्धि में यह अज्ञानता का विचार नहीं आया था, तब तक संसार में मनुष्य मात्र की एक ही जाति थी।

''दुनिया का इकरंगी आलम आम था।
पहले एक कौम थी, इंसान जिसका नाम था।।''

ये जातिवाद हमारी सनातन संस्कृति के अनुसार नहीं है। जिस प्रकार आज अनेक ऐसी कई मान्यतायें प्रचलन में आ गई हैं, जिनका कोई ठोस आधार ही नहीं है किन्तु, उन्हें मानने वालों की संख्या अच्छी खासी हो गई है, इसलिए उसे अब सामाजिक मान्यता के रूप में माना जा रहा है। ऐसे ही वर्ण-व्यवस्था के स्थान पर जाति-व्यवस्था का प्रचलन हो गया। क्यों हुआ, कब से हुआ, यह कहीं स्पष्ट नहीं है।

समाज में पहले वर्ण-व्यवस्था थी, जिसमें मनुष्य की पहचान गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर थी, उचित थी। मनुष्य को अपनी योग्यता के अनुसार वर्णों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र स्थान प्राप्त होता था।

आज न समाजवाद है, न राष्ट्रवाद है, न मानवीय दृष्टिकोण-इन सब पर भारी जातिवाद है। परिणाम हुआ खरबूजे को देख खरबूजा रंग बदलता है की कहावत चरितार्थ हो रही है। जब जातिवाद को शस्त्र बनाकर ही सब कुछ पाया जा सकता है तो दूसरा वर्ग जो अभी तक जातिवाद को महत्त्व नहीं देता रहा, वह भी इसी ओर प्रेरित होकर जातिवाद को बढ़ावा दे रहा है।

जन्म के अनुसार जाति-व्यवस्था में मनुष्य को बाँटना समस्त समाज के लिए एक नासूर है। ऐसा नासूर, जिसकी आग में समाज, संगठन, संस्कृति, राष्ट्र सभी बुरी तरह झुलस रहे हैं।

जातिवाद और साम्प्रदायिक विचारधारा के कारण यह देश वर्षों तक गुलाम रहा। सनातन धर्म की जातियों में बँटी शक्ति ने विदेशी ताकतों को अवसर प्रदान किया। जातिवाद के पाप के कारण हमने ही भाइयों को तिरस्कृत कर उन्हें सनातन धर्म से पृथक होने हेतु विवश किया। जातिवाद के विष का ही प्रभाव था कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर जैसे महान् व्यक्तित्व को बौद्ध सम्प्रदाय स्वीकार करना पड़ा। हृदय विदारक घटनाओं से पूर्ण मोपला काण्ड, जिससे सनातन संस्कृति को भारी क्षति हुई, उपेक्षा के कारण सनातनधर्मियों ने दूसरे सम्प्रदाय को अपना लिया। जातिवाद का ही दुष्परिणाम कश्मीर, केरल, पूर्वांचल के कई राज्य हैं जहाँ सनातनधर्मी अपने ही देश में अनेक प्रकार के संकट, हिंसा और अपमान से भरी जिन्दगी जी रहे हैं। जाति व सम्प्रदाय का ही परिणाम पाकिस्तान, बंगलादेश व कश्मीर का ताण्डव है। इस जातिवाद, छुआछूत की मानसिकता ने ही अपनी शक्ति, संगठन व देश को कमजोर कर दिया।

जन्म से मनुष्य की जाति मानने का कहीं शास्त्रोक्त कोई प्रमाण नहीं है।

योगिराज कृष्ण ने चार वर्णों को गुण कर्म के अनुसार माना, कहा है-

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः

संसार के श्रेष्ठतम विद्वान् आचार्य मनु ने जन्म से जाति को नहीं माना है। कर्म के अनुसार वर्ण-व्यवस्था का सिद्धान्त माना गया है। **जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।** जन्म से सभी शूद्र हैं, ज्ञानमय संस्कारों से

ब्राह्मण बनते हैं। जन्म से सभी शूद्र अर्थात् अज्ञानी ही होते हैं। क्योंकि बालपन में किसी को कोई ज्ञान नहीं होता इसलिए सभी को शूद्र कहा जाता है। परमात्मा ने हमें यह स्वतन्त्रता दी है कि हम अपने जीवन को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र, जो बनाना चाहें स्वयं बना सकते हैं। जन्म से कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य पैदा नहीं होता। शूद्र को किसी जाति से जोड़ना मूर्खता है।

प्राचीन समय में वर्ण व्यवस्था ही व्यवहार में थी, इसकी पुष्टि तुलसीदास जी की इन पंक्तियों से भी होती है।

वरनाश्रम निज-निज धरम निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग।।

जाति शब्द का उपयोग प्राणियों की एक प्रकार की श्रेणी के लिए किया जाता है, पहले यही किया जाता था। जैसे पंखों से उड़ने वाले समस्त पक्षियों की जाति पक्षी जाति, जल में रहने वाले समस्त जीवों की जलचर जाति, चौपाए प्राणियों की पशु जाति और मनुष्य के रूप में जन्मे सभी की मानव जाति एक ही कहलायेगी 'मानव जाति'।

हमारी सनातन संस्कृति मनुष्य बनने का सन्देश देती है। "**मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्**" पहले स्वयं मनुष्य बनो और दूसरों को भी मनुष्य बनाओ। किसी जाति का सदस्य बनने को नहीं कहा।

हम जिन भगवान् राम को मानते हैं, उन्होंने सबको गले लगाया। रात-दिन गीतों में गाते हैं "रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम" पर उसे अपने जीवन में आत्मसात नहीं करते।

इसके विपरीत परमात्मा की व्यवस्था को तोड़कर हमारी अज्ञानता व स्वार्थ के कारण जातिवाद को महत्त्व देना उचित नहीं। ऐसा करना पाप है, सामाजिक द्रोह है, ईश्वर के उन पुत्र-पुत्रियों के प्रति अत्याचार है, ऐसे कर्मों से हमें ईश्वर भी क्षमा नहीं करेगा।

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द का जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था। किन्तु वे जन्म के अनुसार जातिवाद के विरोधी रहे। समाज को इस सामाजिक बुराई को नष्ट करने का मार्गदर्शन दिया। उनके अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द ने अछूतोद्धार का प्रस्ताव अमृतसर में हुए कांग्रेस अधिवेशन में रखा। जातिवाद से दुःखी हजारों सनातनधर्मियों को विधर्मी होने से बचाया। हजारों को सनातन धर्म में आने का मार्ग खोल दिया। इस प्रयास से हजारों पुनः सनातनधर्मी बन गए।

आर्यसमाज ने यह आन्दोलन चलाया है, जिसका परिणाम है कि अन्य समाज की दृष्टि से जो अछूत, हरिजन, दलित कहलाते हैं उन परिवारों के अनेक व्यक्ति आज विद्वान्, पुरोहित, प्रचारक, संन्यासी बनकर देश-विदेश में सम्मानजनक स्थान प्राप्त कर पुज रहे हैं।

आइये! जातिवाद के कलंक को दूर करें, राजनेताओं के स्वार्थ और साम्प्रदायिक षड्यन्त्रों से दूर होकर मनुष्य-मनुष्य को एक मानें, ताकि समाज, संस्कृति और राष्ट्र सुरक्षित संगठित होकर प्रगतिशील बने। धन्यवाद।

बस तू ही है

सोमेश पाठक

हे ईश 'सच्चिदानन्द' तुम्हीं तो सब जग के रखवारे हो।
तुम हो अनादि, तुम हो अनन्त सृष्टि के सिरजनहारे हो।
तुम निराकार, तुम शक्तिमान्
कण-कण में तुम ही व्यापक हो।
सब जग के तुम आधार प्रभु
सबके रक्षक और पालक हो।
नभ के अगणित तारों में केवल एक तुम्हारी ज्योति है।
तप रवि में शीत शशि में तुमसे ही तो होती है।
तुम दयावान् तुम निर्विकार
तुम अनुपम तुम सर्वेश्वर हो।
तुम अजर, अमर, अन्तर्यामी
गत्-जगती के जगदीश्वर हो।
नित्य नित्यता नित्य अगर तुम ना हो तो ना हो सकती।
और सत्यता भी हरगिज ना सत्य कभी भी हो सकती।
हे अखिलेश्वर! यह अखिल विश्व
बस तेरा ही गुणगान करे।
तुझको जाने तुझको माने
नित तेरा ही बस ध्यान धरे।
तुझ सा महान् हे! परमेश्वर बस तू ही है, बस तू ही है।
बस तू ही है और तू ही है, और तू ही है बस तू ही है।

परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वप्नानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

शङ्का समाधान - २६

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का- १. मन्दिरों में मूर्तियों को स्थापित करने से पूर्व उनमें प्राण प्रतिष्ठा की जाती है। इसका समाधान दें तथा औचित्य बताएँ?

२. पञ्चकों का क्या प्रभाव होता है?

३. मंगल राशि के युवाओं और युवतियों के विवाह में बहुत सी बातें कही जाती हैं। इस राशि का क्या प्रभाव होता है?

डॉ. लक्ष्मण सिंह टाँक, मुजफ्फरनगर

समाधान- १. मूर्तिपूजक वर्ग मन्दिर में स्वाभीष्ट उपास्य की प्रतिमा स्थापित करते हैं। यह प्रतिमा/विग्रह अधिकांशतः पत्थर से बनाए जाते हैं। अपवादस्वरूप इन्हें स्वर्ण-कांसा-पीतल-तांबा आदि से भी बनाया जाता है। मूर्तिपूजक व अन्य सभी जानते हैं कि ये विग्रह जड़ पदार्थों से निर्मित होने के कारण जड़ हैं, किन्तु जड़ पदार्थ किसी प्रार्थना को सुन, तदनुरूप फलप्रदान तथा उपासक की इच्छा पूर्ण करने में असमर्थ हैं। यदि ये कामनापूर्ति-फलप्रदान में असमर्थ रहते हैं, तब प्रार्थना कोई क्यों करेगा? इसीलिए इन विग्रहों में प्राण-प्रतिष्ठा की कल्पना की गयी, जिससे इन्हें चेतनवत् कहा जा सके।

प्राण-प्रतिष्ठा के लिए कतिपय मन्त्र/श्लोक विनियुक्त कर लिए गए हैं। इन मन्त्रों के पाठपूर्वक निश्चित विधि/प्रक्रिया से अर्चना कर यह मान लिया जाता है कि अब यह विग्रह-प्राणप्रतिष्ठा होने के कारण प्राणवान्/चेतन है। इन मन्त्रों में एक मन्त्र है-

एह्यश्मानमातिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः।
कृण्वन्तु विश्वे देवा आयुष्टे शरदः शतम्।।

अथर्व. २.१३.४

पौराणिक विद्वान् पं. श्रीकृष्ण शास्त्री ११ दिसम्बर सन् १९४० ई. को मियानी जिला-सरगोधा (अब पाकिस्तान) में- ''हे परमेश्वर! आप पत्थर में स्थित हूजिए, यह पत्थर आपका शरीर होवे। मूर्ति में जब प्राण प्रतिष्ठा कराई जाती है, तब यह मन्त्र पढ़ा जाता है।'' -द्र. 'निर्णय के तट पर' प्रथम भाग, पृ. १११

अथर्ववेदीय मन्त्र विनियोग का विधायक **कौशिक सूत्र** है। कौशिक के अनुसार-बालक के गोदान (केशान्त) संस्कार के अवसर पर केश-नख निकृन्तन के अनन्तर बालक को स्नान कराकर ''परिधत्त धत्त. ...'' तथा ''परीदं वासो. ...'' **अथर्व.** २.१३.२-३ (एह्यश्मानम्. से पूर्ववर्ती) इन दो मन्त्रों से अहत/अखण्ड नए वस्त्र बालक को धारण करा, उपनयन से पूर्व- ''**एह्यश्मानमातिष्ठ.**'' (पं. श्रीकृष्ण शास्त्री द्वारा प्राण प्रतिष्ठा में विनियुक्त मन्त्र) मन्त्र का उच्चारण कर बालक के दक्षिण पग को पत्थर पर स्थापन करा, अग्नि की प्रदक्षिणा का विधान है। तद्यथा-

''**एह्यश्मानमातिष्ठेति दक्षिणेन पादेनाश्ममण्डलमास्थाप्य प्रदक्षिणमग्निमनुपरिणीय**'' - कौ. सू. ५४.८

इस सन्दर्भ में **भारद्वाज गृह्यसूत्र १.३ भी द्रष्टव्य** है। एतदनन्तर उपनयन संस्कार किया जाता है।

इस प्रकार मूर्तिपूजक समुदाय द्वारा प्राणप्रतिष्ठा में विनियुक्त मन्त्र कौशिक एवं भारद्वाज द्वारा उपनीयमान बालक द्वारा कर्त्तव्य शिलारोहण में विनियुक्त है। आचार्य सायण भी उक्त मन्त्र का अर्थ निम्नवत् करते हैं-

''**हे माणवक एहि आगच्छ। अश्मानम् आतिष्ठ दक्षिणेन पादेन आक्राम। ते तव तनुः शरीरम् अश्मा भवतु। अश्मवद् रोगादिविनिर्मुक्तं दृढं भवतु। विश्वे देवाश्च ते तव शरदः शतम् शतसंवत्सर परिमितम् आयुः कृण्वन्तु कुर्वन्तु।**''

इस प्रकार इस मन्त्र द्वारा मूर्ति/विग्रह में प्राण-प्रतिष्ठा का समर्थन न तो सूत्रकार करते हैं और न ही आचार्य सायण। वैसे भी विचारणीय है कि यदि मन्त्रपाठ से जड़ मूर्ति आदि में प्राण-प्रतिष्ठा हो सकती है, तब उसी शरीर आदि जिसकी अभी-अभी मृत्यु हुई है, उसमें पुनः प्राण-प्रतिष्ठा क्यों नहीं की जा सकती? वैसे भी इस मन्त्र में सौ वर्ष की परिमित आयु का वर्णन है। यदि दुर्जनतोष न्याय से मान भी लें तो क्या मूर्ति में सौ वर्ष पश्चात् पुनः प्राण-प्रतिष्ठा होगी? आज तक किसी मूर्ति में पुनः सौ वर्ष पश्चात् प्राण-प्रतिष्ठा की जाती न तो कहीं देखी जाती है और न ही कहीं वर्णित है। तब क्या मन्त्र-वर्णन अलीक है?

पौराणिक विद्वान् **अम्बिकादत्त व्यास** विरचित **'शिवराजविजयम्'** का वह सन्दर्भ द्रष्टव्य है, जिसमें महमूद गजनवी के सोमनाथ आक्रमण के समय मूर्ति तोड़ते समय

पुजारी वर्ग द्वारा -''**त्यजेमाम् अकिञ्चित्करीं जड़ां महादेवमूर्तिम्...**'' स्वयं सोमनाथ की प्रतिमा को कुछ भी न करने वाली (अकिञ्चित्करी) तथा जड़ (जड़ाम्) कहा गया है।

अत: प्राण प्रतिष्ठा अवैदिक भ्रममात्र है।

२-३. फलित ज्योतिष के अनुसार-धनिष्ठा-शतभिषा पूर्वाभाद्रपद-उत्तराभाद्रपद-रेवती-ये पाँच नक्षत्र पंचक कहलाते हैं। फलित ज्योतिष में आस्था रखने वाले प्राय: इन नक्षत्रों में विवाह आदि शुभकार्य नहीं करते हैं। ये नक्षत्र खगोलीय घटना मात्र हैं। यदि ये मनुष्य के लिए अनुपयोगी या त्याज्य हैं, तब पंचक मानने वालों के यहाँ इस अवधि में पुत्रादि जन्म भी अकल्याणकर क्यों नहीं?

मंगल को समझने के लिए फलित ज्योतिष की दृष्टि से यह ध्यातव्य है कि १-४-७-८-१२ इन पाँच स्थानों में अगर मंगल है, तब इस दशा में जन्म लेने वाले जातक मंगली कहलाते हैं- (द्रष्टव्य चित्र-१)। किन्तु यदि इन्हीं स्थानों पर मंगल के साथ सूर्य-गुरु-शनि-राहु ग्रह हों, तो जातक का मंगली दोष समाप्त हो जाता है- (द्रष्टव्य चित्र-२)। इसे निम्न चित्रानुसार समझें-

चित्र-१

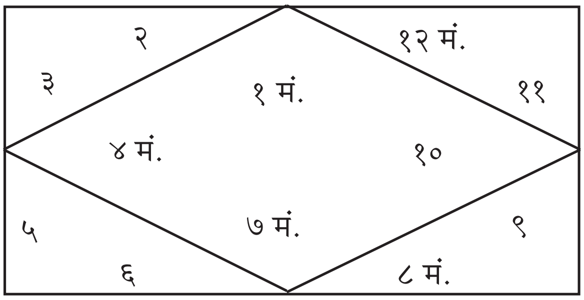

चित्र-२

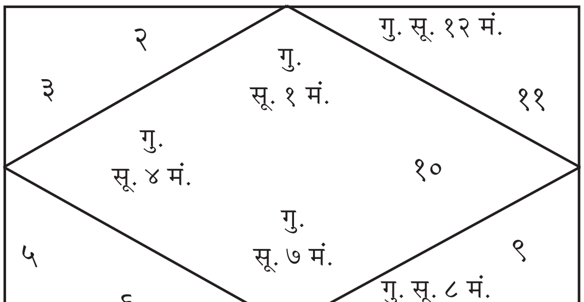

संकेत- मं.=मंगल, गु.=गुरु, सू.=सूर्य, रा.=राहु, श.=शनि

उपर्युक्त पंचक एवं मंगल आदि के सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द का अभिमत द्रष्टव्य है। **महर्षि सत्यार्थप्रकाश समुल्लास-३, पृष्ठ. ५१ पर लिखते हैं-**

''...दो वर्ष में ज्योतिष शास्त्र, सूर्यसिद्धान्तादि जिसमें बीजगणित, अंक, भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या है इसको यथावत् सीखें। तत्पश्चात् सब प्रकार की हस्तक्रिया, यन्त्रकला आदि को सीखें, परन्तु जितने ग्रह, नक्षत्र, जन्मपत्र, राशि, मुहूर्त्त आदि के फल के विधायक ग्रन्थ हैं, उनको झूठ समझके कभी न पढ़ें और पढ़ावें।''

समुल्लास-२, पृ. २७ फलित ज्योतिष का निराकरण करते हुए-

''इस पर सूर्यादि क्रूर ग्रह चढ़े हैं।...जैसे यह पृथिवी जड़ है, वैसे ही सूर्यादि लोक हैं। वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न कुछ भी नहीं कर सकते। क्या ये चेतन हैं जो क्रोधित होके दु:ख और शान्त होके सुख दे सकें।

प्रश्न- क्या ये जो संसार में राजा-प्रजा सुखी-दु:खी हो रहे हैं, यह ग्रहों का फल नहीं है?

उत्तर- नहीं, ये सब पाप-पुण्यों के फल हैं।

प्रश्न- तो क्या ज्योतिषशास्त्र झूठा है?

उत्तर- नहीं, जो उसमें अंक, बीज, रेखागणित विद्या है वह सब सच्ची, जो फल की लीला है वह सब झूठी है।

प्रश्न- क्या जो यह जन्मपत्र है सो निष्फल है?

उत्तर- हाँ, वह जन्मपत्र नहीं किन्तु उसका नाम...''

अत: सार रूप में कहा जा सकता है कि मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा सम्भव नहीं है। यह पूर्णत: अवैदिक क्रिया मात्र है। मूर्ति-पूजा प्रारम्भ होने पर जड़ को चेतनवत् प्रदर्शित करने का अनर्थक प्रयास है।

धनिष्ठा से रेवती पर्यन्त पाँच नक्षत्र अन्य नक्षत्रों की भाँति ही हैं। मंगल में उत्पन्न जातक के सन्दर्भ में उसे मंगली/मांगलिक कह उसके दोष शमनार्थ विविध उपाय वर्णित करना अन्धविश्वास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। फलित ज्योतिष न मानने वाले नास्तिकों, ईसाई, मुसलमानों आदि के यहाँ उस खगोलीय स्थिति में क्या बच्चे जन्म नहीं लेते? इन ग्रहों का विपरीत प्रभाव उन पर क्यों नहीं पड़ता? यह मात्र भ्रम है। यदि कोई स्वयं ही इसे सत्य मान हीनता से ग्रस्त हो जाये तो उसका कोई क्या कर सकता है?

'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ५ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है।'सत्यार्थप्रकाश' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती है, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। इस पुस्तक की छपाई में एक प्रति का खर्च लगभग १०० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १०० आदि।**

१०० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	२१००/- रु.
	३० प्रतियाँ	३१००/- रु.
	५० प्रतियाँ	५१००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	११०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

हर मन्त्रपुरुष अमर होता है।

डॉ. चेतना वेदी

२०१५ ऋषि उद्यान, अजमेर में आयोजित ध्यान शिविर में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। यद्यपि आने का मुख्य उद्देश्य सभी से मिलना था। यहीं पर मैंने आखिरी बार आचार्य जी को देखा और सुना। तब मन में एक कसक रह गई थी, क्योंकि शिविर के नियमानुसार मौन अनिवार्य था। इसलिए मन को सन्तोष हो सके ऐसी प्रत्यक्ष चर्चा या संवाद फिर हमेशा के लिए रह गया। पता नहीं था यह मौन इतना लम्बा हो जायेगा...। सच है, कुछ बातें सुधारने का समय, समय फिर नहीं देता। आज मैं क्यों लिख रही हूँ, इसलिए नहीं क्योंकि मैं उनके विषय में बहुत कुछ जानती हूँ। बहुत पास से न तो समझा, न सुना, बहुत कम मिलना-बोलना भी रहा। फिर भी मेरे जैसे ही कई लोग होंगे जो आपके लिए लिख सकते हैं, यही आपकी खासियत थी। बच्चे से लेकर वृद्ध तक के आयु वर्ग के व्यक्ति को देने के लिए आपके पास एक चीज थी-'विचार'। सामाजिक दृष्टि से उनके विचारों की उपयोगिता उनके सम्पादकीय कहते हैं। उनकी विद्वत्ता की खासियत थी सरल अभिव्यक्ति, उनकी जीवन्त प्रभावशाली वाग्मिता, विनोदप्रिय शैली। निश्चय ही इस विषय पर कहने वाले अनेक वरेण्य लेखक लिख ही चुके हैं। यह विचित्र विडम्बना ही है कि कई बार आचार्य जी ने आग्रह के साथ मुझसे कहा था कि कुछ लिखकर भेज दे परोपकारी में। पर उस समय पीएच.डी. के काम में लगी थी, फिर बाद में लिख देंगे ऐसा सोचती रही। और जब लिखने का अवसर आया तो ऐसा...। सर्वथा अचिन्तित थी यह सूचना, बिल्कुल कर्कश...। यही कारण था कि माताजी ने आपके जाने पर जब फिर से लिखने के लिए कहा तो इस बार लिखना भी था तो क्या!!! लिख दिया पर भेजने का मन जाता रहा। पर आज पुनः जागरण हुआ है। खैर... माताजी का भी अपार स्नेह मिला है वे समझ सकेंगी। 'आचार्यजी' इसी संबोधन से बुलाते हुए अधिकांश आपको सुना है। गुरुकुल में पढ़ने वालों के लिए यह संबोधन अति परिचित होता है। आचार्य का व्यक्तित्व, विचार, जीवन-शैली बहुत गहराई से शिष्य को प्रभावित करती है। आज इस एक आचार्य के प्रति भावनिवेदन में स्मृति की एक और कड़ी कष्ट देती है। वे हैं मेरी श्रद्धया आचार्या जी (पू. आचार्या मेधा देवी जी)। वार्षिकोत्सव पर सस्नेह निमन्त्रण देती थीं आप। इन्हीं कार्यक्रमों में पहली बार आचार्य धर्मवीर जी को देखा और सुना और आपके चिन्तन ने सहज ही हमें हमेशा के लिए अपना श्रोता बना लिया। वास्तव में कुछ व्यक्तित्व ऐसे होते हैं जो प्रथम दर्शन में ही कुछ खास छाप छोड़ जाते हैं। कभी-कभी यह खास जल्दी समझ भी नहीं आता लेकिन अव्यक्त भाव हमें जोड़े रखते हैं। आचार्य जी को अध्ययन-काल में २-३ बार मंच से ही देखते-सुनते रहे, संवाद का समय बहुत समय बाद में मिला। देखा जाए तो व्यक्तिगत रूप से आचार्य जी एवं माताजी के साथ जुड़े हुए समय की अवधि बहुत कम है, किन्तु आत्मीयता की सहजता के आगे समय को समर्पण करने में क्षण भी नहीं लगता। इसका अनुभव यदि हमारे जैसे अन्यत्र शिक्षारत छात्रों को आता है तो निश्चय ही श्रेय तो श्रेयान् को ही जाता है।

जब भी आपका पुणे आना होता था तो मुझे एक बड़ी आत्मीय परन्तु अपेक्षारहित ऐसी सूचना मिलती थी 'बेटा! पुणे आ रहा हूँ समय हो तो आ जाना।' एक बार व्यस्तता के कारण स्टेशन पर ही मिलना हो पाया। माताजी साथ में थीं। दोनों ही अपना सामान उठाके गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे थे। मुझे देखते ही बोले-देखो आ गई!। इन दो शब्दों जैसे कई शब्दों में छिपे स्नेह व प्रसन्नता को आज केवल स्मृतियों में महसूस करना है। जीवन में यह बड़ा सौभाग्य होता है कि आपको अपने गुरुजन व उनके समान प्रखरता रखने वाले बड़ों का स्नेह व आशीष मिले, पर यही जब केवल स्मरण का विषय बन जाए तो दु:ख स्वाभाविक है।

यूँ तो अपने से बड़ों के व्यक्तित्व के विषय में लेखनी चलाना छोटों का काम नहीं और वैसे भी इस सुगन्ध का वर्णन किस गन्ध से करेंगे? जो है उसे जताना नहीं पड़ता, जो नहीं है उसे मनोरम शब्द, मधुर स्वरों की औपचारिकता भी मन के आसन पर विराजमान नहीं कर पाती। हम तो बड़ों के गुण केवल इसलिए देखना, समझना और उनका विश्लेषण करना चाहते हैं ताकि बाह्य प्रेरणा आन्तरिक

प्रेरणा को जन्म दे सके। आचार्य जी विनोद में भी कई बार कुछ गंभीर बातें समझा जाते थे। आपसे मिलकर एक ही बात महसूस की है कि सहजता में बड़ी ताकत होती है। यह सहजता व्यवहार में, विद्या में, वक्तृत्व में तभी पैदा होती है जब उस विषय ने स्वयं ही स्वयं को प्रस्तुत कर दिया हो। विद्या पर पूर्ण अधिकार ही उसे सहज बना देता है और आपको किसी भी विषय पर चिन्तन प्रस्तुत करने में महारथ प्राप्त था। आपकी कुछ स्मृतियाँ बहुत प्रेरक हैं। देखने में आता है कि बहुत सारे प्रतिभासम्पन्न लोगों का व्यक्तिगत पक्ष सम्पन्न होता है पर सामाजिक पक्ष पर उस पक्ष का प्रभाव या उपयोग विविध कारणों से उतना नहीं हो पाता। यद्यपि इसमें कई कारण हो सकते हैं, परन्तु आचार्य जी के ये दोनों रूप भरपूर सम्पन्न थे।

यह बात मेरे अध्ययनकाल की है, वार्षिकोत्सव पर आप विद्यालय में पधारे हुए थे और हास्य-विनोद में ही अन्य विद्वानों के साथ चर्चा चल रही थी। वे शायद अपने विद्यार्थी काल के कुछ संस्मरण सुना रहे थे। किसी ने प्रश्न किया कि अगर ये तत्कालीन विद्वान् न रहे तो आगे क्या होगा। आचार्य जी ने तत्काल उत्तर दिया-हम लोग ही होंगे और सुनने वालों का जोरदार ठहाका गूँज उठा। बात हास्य में आई जरूर थी, पर वास्तव में बिना परिश्रम, लगन, समर्पण के इस आत्मविश्वास से यह बात कहना असंभव है। विद्यार्थियों के लिए एक उत्तम सन्देश आपने दिया कि आने वाली पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी का उत्तरदायित्व संभालना है, इस भावना से तैयारी होनी चाहिए। आचार्यजी का संस्थागत दृष्टिकोण भी बड़ा विशाल एवं दूरदर्शी था। किसी अन्य भेंट में वे हमारी आचार्याजी से बातचीत के दौरान कहने लगे कि 'मैं एक बात से बहुत सन्तुष्ट हूँ कि मेरे बाद संस्था को चलाने वाले कई लोग तैयार हैं। इसलिए 'धर्मवीर' के बाद कौन? ऐसा प्रश्न नहीं आयेगा और यही किसी भी संस्था के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि होती है।' उनके ये वाक्य आज समझ आते हैं। ऐसी कई बातें हैं, पर एक विद्यार्थी का लक्ष्य व सेवारत संस्थाओं का लक्ष्य उनके मन में न केवल स्पष्ट था अपितु क्रियान्वित भी था। पता नहीं और ऐसे कितने ही सिद्ध कर्मों से उत्पन्न सुख व अनुभवों से आप भरे थे, जो आज हम नहीं जान पायेंगे।

अधिक क्या कहा जाये, आचार्य परम्परा के विविध आयामों के पोषक आप आचार्यप्रवर का स्मरण भी सभी पूर्वाचार्यों के अमर यश के साथ ही किया जायेगा। आप आज इस स्मरणमाला के एक मणि बन गये हैं। इस यशस्विनी परम्परा को मेरी ये छोटी सी भावाञ्जलि समर्पित है-

कृति की स्मृति में नेत्रपट का यह जो है उन्मीलन निमीलन,
होते हैं भाव व्यक्त सभी इससे, जो हृदय के हैं कोमल स्पन्दन।
यह जीवन है रण, भेजा है जय के लिए, रहे तुम्हें सदा स्मरण,
रण में निश्चित है मरण, पर हो अमर तेरे चिन्तन का अनुरणन।
हे 'चेतन' अमर है तू, क्योंकि स्मरण का नहीं होता कभी मरण,
काल के इस विनम्र समर्पण को, करते हैं तुम्हें, श्रद्धा से अर्पण।

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

प्रिय पाठक गण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरूरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अत: ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

१६ से ३० अप्रैल २०१८

संस्था-समाचार

जन्मदिवस पर यज्ञ- ऋषि उद्यान की भव्य यज्ञशाला में ३० अप्रैल को अजमेर निवासी राजेश आनन्द जी ने अपने जन्मदिन पर अतिथियज्ञ के होता के रूप में यज्ञ किया । परोपकारिणी सभा की ओर से हार्दिक शुभकामनायें।

शोक समाचार- ऋषि उद्यान में अनेक वर्षों से स्वाध्याय एवं साधनारत स्वामी देवेन्द्रानन्द जी का २९ अप्रैल रविवार को प्रातःकाल देहावसान हो गया। श्रद्धाञ्जलि सभा २ मई बुधवार को दोपहर पंचकूला हरियाणा में सम्पन्न हुई। परोपकारिणी सभा एवं ऋषि उद्यान परिवार की ओर से स्वामी जी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, वैदिक यन्त्रालय, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, अन्त्येष्टि स्थल-मलूसर, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, उपदेश ग्रहण करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्मचारी, आर्यवीर, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। सभी आगन्तुकों के निवास एवं नाश्ता, भोजन, दूध आदि की समुचित व्यवस्था ऋषि उद्यान में उपलब्ध रहती है। पिछले १५ दिनों में भटिन्डा, बुरहानपुर, दिल्ली, पुष्कर, जयपुर, गुरुग्राम, प्रतापपुरा, रेवाड़ी, बुलन्दशहर, छोटी सादड़ी, मोदीनगर, मसूदा, दादरी, हरिद्वार, उज्जैन, झज्जर, उत्तरकाशी, हजारीबाग, सूरत आदि स्थानों से ३९ अतिथि ऋषि उद्यान पधारे।

दैनिक प्रवचन-प्रातःकालीन सत्संग में स्वामी विष्वङ् परिव्राजक, आचार्य कर्मवीर के व्याख्यान हुए। सोमवार से शुक्रवार तक सायंकालीन सत्संग में आचार्य सत्येन्द्र ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पुस्तक का पाठ एवं व्याख्यान किया। सायंकालीन प्रवचन में ही स्वामी शंकरदेव, स्वामी सत्यव्रतानन्द तथा स्वामी शिवानन्द ने व्याख्यान दिया। शनिवार सायंकालीन सत्संग में श्री मुमुक्षु मुनि और श्री लक्ष्मण मुनि ने व्याख्यान दिया। रविवार प्रातःकालीन सत्संग में ब्र. उत्तम ने भजन सुनाया। सायंकालीन प्रवचन में ब्र. बालकृष्ण और ब्र. प्रणव ने व्याख्यान दिया।

पाठकों की प्रतिक्रिया

१. आप द्वारा विज्ञापित 'एक आहुति अपने आचार्य के लिए' परोपकारी के अंक में देखी। पूज्य आचार्य जी ने आर्यसमाज की जो सेवा 'परोपकारी' के माध्यम से की है, वह अतुलनीय है। उस महान् आत्मा की स्मृति हेतु जो स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है वह सराहनीय कदम है। मैं भी उस स्थिर निधि में एक अल्प सहयोग कर रहा हूँ।

सत्येन्द्र कुमार, बीसलपुर, पीलीभीत, उ.प्र.।

२. श्री दिनेशचन्द्र जी शर्मा। आपको परोपकारिणी सभा के सभी साथियों सहित सादर प्रणाम। आपके कुशल सम्पादन में पाक्षिक परोपकारी पत्रिका सर्वश्रेष्ठ सराहनीय प्रकाशित हो रही है। विषयवस्तु सरल, दिव्य, अनूठी, बेजोड़, सारगर्भित, प्रेरणादायी व अतिविशेष है। साधुवाद! धन्यवाद!! पत्र की सादर शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

सुन्दरलाल प्रह्लाद चौधरी, बुरहानपुर (म.प्र.)

३. प्रतिष्ठित, सुपरिचित पत्रिका 'परोपकारी' देखने, पढ़ने का सौभाग्य 'सु-साहित्य पुस्तकालय' में हुआ। प्रत्येक अंक बेहतर से बेहतरीन है। प्रत्येक अंक रूचिकर, ज्ञानवर्धक व पठनीय है।

आपके इस सुप्रयास के लिये सम्पाक मंडल बधाई व साधुवाद के पात्र हैं। सस्नेह

सन्तोष बी. गुप्ता, अमरावती, विदर्भ।

१५ जून पूण्यतिथि पर विशेष

ऋषि की मथुरा जन्म-शताब्दी का ऐतिहासिक भाषण
श्री पं. चमूपति जी का व्याख्यान

१५ जून पं. चमूपति की पूण्यतिथि है। साथ ही यह वर्ष उनके 'गृहनिष्कासन का शताब्दी वर्ष' भी है। इस अवसर पर पाठकों को क्या भेंट करें, यह विचार करते हुए उनके द्वारा मथुरा में 'महर्षि दयानन्द जन्म शताब्दी' पर दिया गया व्याख्यान स्मरण हो आया, वही भेंट पाठकों को समर्पित करते हैं। महर्षि के स्वप्नों का दिग्दर्शन पण्डित जी ने इस व्याख्यान में कराया है। - सम्पादक

देवियो और भद्र पुरुषो!

मैं तो मथुरा नगरी में शिष्य रूप से आया था न कि इस वेदी पर खड़ा होकर व्याख्यान देने के लिए। मैं तो यह विचार मन में रखकर आया था कि अब गुरु की नगरी में चलता हूँ। वहाँ पद-पद पर शिक्षा ग्रहण करूँगा और उन शिक्षाओं को अपने जीवन का आधार बनाकर घर को लौटूँगा, परन्तु अब यह कार्य सौंपा गया है कि इस वेदी पर खड़ा होऊँ। मैं लिखने का प्रयत्न कर अपने को उपदेशक नहीं बना सकता। मेरे हृदय का इस समय यही भाव है जो इधर-उधर प्रचार करके अपने माता-पिता के घर पर पहुँचने वाले व्यक्ति का होता है। मैं लाखों बार उपदेशक बनने का विचार करता हूँ, परन्तु बन नहीं पाता। यह वही स्थान है जहाँ मैंने उपदेश धारण किया और हमारे गुरु ने उपदेश दिया था। यह स्थान कृष्ण का मक़सूद समझा जाता है। जब यहाँ कंस राजा था तब यहाँ की प्रजा दु:खी थी और प्रजा के कष्ट निवारणार्थ एक तंग कोठरी में कृष्ण ने जन्म लिया था। वे व्रजपाल थे। लोगों के ऊपर होने वाले बलात्कारों और अत्याचारों को दूर करने के लिए उनका जन्म हुआ था। मुरली द्वारा स्वाधीनता के सन्देश को सुमधुर ध्वनि में गुञ्जायमान करने के लिए उनका जन्म हुआ था। यह ध्वनि कुरुक्षेत्र में गूँजी थी। उसने रुद्र रूप धारण किया और पापों का नाश किया। कृष्ण को व्रजपाल कहा जाता है और इसलिए कहा जाता है कि उन्होंने मथुरा में जन्म लिया था। आज का समय इसलिए नहीं है कि कृष्ण पर कुछ विचार किया जाय क्योंकि यह पुराना स्वप्न हो गया और इसे कई प्रकार से लाञ्छित किया जा चुका है। लोगों ने प्यार करते-करते अपने प्यारे को प्यार के योग्य नहीं रखा।

श्री कृष्ण ने पहला जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द ने दूसरा जन्म लिया और संसार में दूसरा जन्म ही असली जन्म है। कृष्ण ने अपनी माता के गर्भ से जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द ने अपने गुरु से जन्म लिया। शास्त्र में लिखा है कि जब लड़का गुरुकुल में प्रवेश करता है तब आचार्य उसको उसी प्रकार लेता है जिस प्रकार माता अपनी गोद में लेती है। यदि श्रीकृष्ण ने जेल में जन्म लिया तो स्वामी दयानन्द छोटी सी कोठरी में पैदा हुए। अन्धेरे से रोशनी का जन्म होता है। रात में से दिन का उदय होता है। उसी प्रकार तंग कोठरी में प्रकाश होता है। वेद में लिखा है कि आत्मशक्ति का जन्म आग की भट्टी में से होता है।

जब स्वामी जी पाठशाला में थे तब उन्हें झाड़ू देने का काम सौंपा गया था। उन्होंने गुरु की कोठरी में झाड़ू दी और संसार को शिक्षा दी कि वह भी झाड़ू दे। गुरु विरजानन्द समझते थे कि वही झाड़ू संसार की कुरीतियों को बुहार देगी। यह वही स्थान है जहाँ ऋषि दयानन्द पानी भरकर लाते थे और गुरु को स्नान कराते थे। आज उनकी बहाई हुई यमुना में समस्त संसार स्नान करता हुआ दीख पड़ता है। आज हमको यह दिखाना है कि यह स्थान एक समुद्र है और लोग इसमें बहे चले जाते हैं। कृष्ण ने अपना जीवन लीला में बिताया था। ऋषि दयानन्द ने अपना समय भट्टी में बिताया था।

स्वामी दयानन्द के आने से पूर्व सब ज्ञानियों ने समझा था कि हमें काम नहीं करना है। स्वामी दयानन्द ने कहा कि वेद में लिखा है कि आत्मा कर्म करने के लिए है और वह कर्म करते-करते जायेगा। स्वामी दयानन्द के जीवन से यदि कोई शिक्षा मिलती है तो वह यह है कि आत्मा को

कर्म करते-करते जाता है। स्वामी दयानन्द का जीवन कर्ममय जीवन है।

प्रोफेसर मैक्समूलर एक स्थान पर धर्मों व मतों का विभाग करते हुए कहते हैं-धर्म के दो रूप हैं एक प्रचारक धर्म और दूसरा अप्रचारक धर्म। मिशनरी का धर्म प्रचारक धर्म है? संसार में जो भी मिशनरी जन्म लेता है वह समझता है कि संसार पर अपने धर्म की ज्योति डाल दे। अप्रचारक धर्म वह है जिसके अनुयायी यह चाहें कि हमारे धर्म का संसार में प्रचार न हो। प्रोफेसर मैक्समूलर लिखता है ईसाई और इस्लाम ही प्रचारक धर्म है। बौद्ध और हिन्दू धर्म अप्रचारक धर्म हैं। वैदिक धर्म भी अप्रचारक है।

यदि स्वामी दयानन्द के उपदेशों को हम छोड़ देते तो सचमुच हमारा धर्म अप्रचारक धर्म था। हम कहते थे, हम दया करते हैं, परन्तु दया का स्वरूप नहीं जानते थे। आज आर्य जाति का बच्चा-बच्चा जानता है कि जो हिन्दू मुसलमान हो गया हो उसे हम अपनी जाति में पुन: ले सकते हैं। बात यह है कि लोगों ने धर्म के स्वरूप को शुद्धि के स्वरूप में नहीं पहिचाना। इसका स्वरूप समझा है मौलाना मुहम्मद अली ने। काकीनाड़ा कांग्रेस में उन्होंने कहा था कि हिन्दू और मुसलमानों में केवल इतना ही भेद है कि ''मुसलमान एक हंडिया पकाते हैं। वे बड़े से बड़े आदमी को इसमें से खिलाना चाहते हैं। वे सब इस विषय में एक हैं। विपरीत इसके हिन्दू समझता है कि उसने एक बड़ा चौका तैयार कर लिया है और उसके भोजन पर हरेक की दृष्टि नहीं पड़ सकती है।'' हम यह समझते हैं कि मुसलमान को मुसलमान रहने दें। ईसाई को ईसाई रहने दें। असल में हम आलसी थे। हम struggle (संघर्ष) में आने से डरते थे। स्वामी दयानन्द आया। उसने अपने नाम को सार्थक किया। दया को क्रिया का रूप दिया।

बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ राजकुमार चीन में गया था। बर्मा में गया था, परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि आज बौद्ध धर्म को भी अप्रचारक धर्म कहा जाता है। स्वामी दयानन्द आये और उन्होंने वेद के शब्दों में नाद बजाया और कहा कि हमें सब को आर्य बनाना है। ऐसे नहीं जैसे मौ. ख्वाजा हसन निज़ामी चाहते हैं। आज स्वामी दयानन्द का नाम लेते हैं तो उनके जीवन की क्रिया मालूम हो जाती है कि किस प्रकार उन्होंने अपने मत को फैलाया था।

जिस दिन मैं लाहौर से रावलपिंडी आया, उस दिन लोगों ने मुझे कहा कि यह वही स्थान है जहाँ स्वामी दयानन्द भटकता था और लोग उसे बैठने नहीं देते थे। यह वही स्थान है जिस पर लोगों ने ईंट-पत्थरों से स्वामी का स्वागत किया था। अब लोग उसे खोजते हैं, परन्तु वह नहीं मिलता है। आज वह दिन है कि जिस दिन संसार बदला है। ज़मीन आसमान बन गई है और आसमान ज़मीन बन गया है। आज लोग कहते हैं, ''स्वामी दयानन्द! आओ और अपने चरणों से हमारी आँखों को तृप्त करो।'' लाहौर में जगह नहीं मिलती थी। एक मुसलमान भाई ने जगह दी थी। जिस समय मैं लाहौर के मुसलमानों का विचार करता हूं तो सब से पहले रहनुमा खाँ का ध्यान आता है। सब लोग कहते हैं कि यह वही मुसलमान है जिसने स्वामी जी से अपने मकान के पास ठहरने को कहा था। उस समय मैं मुहम्मद अली का नज़ारा भूल जाता हूँ। मैं उसका बड़ा कृतज्ञ हूँ। स्वामी दयानन्द उस मुसलमान के कोठे पर जा उतरे। रात्रि में लैक्चर होता है। विषय है ''कुरान का खंडन।'' आवाज़ उठती है ''विचित्र प्रकार का आदमी है।'' पौराणिक अपने घर में स्थान नहीं देते हैं, ब्रह्मसमाजियों ने उसे अपनी वेदी से नीचे उतार दिया है, बड़ी कृपा से रहनुमा ने स्थान दिया है पर उस उपकार का बदला यह है कि स्वामी कुरान का खंडन करता है। स्वामी दयानन्द कहता है, ''इसमें सन्देह नहीं कि जब मुझे कहीं स्थान न मिला तब रहनुमाखाँ ने अपने घर में बसाया और सहायता के लिए आसन बिछाया। मैं भी उसे मानता हूँ, परन्तु मैंने तो घर-बार छोड़ दिया है, आकाश की छत के नीचे बसेरा करता हूँ, समस्त पृथ्वी मेरा घर है। कुछ दे नहीं सकता हूँ। रुपया नहीं, माल नहीं, राज्य नहीं। मैं क्या दे सकता हूँ? एक चीज है जिसके लिए माता की तपश्चर्या को पीछे छोड़ा है। पिता के प्रेम को छोड़ आया हूँ। मित्रों की मित्रता को त्याग आया हूँ। अनाथ हो गया हूँ। अकिंचन हो गया हूँ। जंगलों में फिरता हूँ। पहाड़ों में फिरता हूँ। झाड़ियों के

अन्दर काँटों को लाँघकर फिरता हूँ। किसलिए? एक सत्य की खोज के लिए। किसी योगी के विषय में सुनता हूँ कि जंगलों में रहते हैं और वहीं पहुँचता हूँ।''

एक स्थान पर एक पादरी स्वामी जी का भक्त बन गया है। वह गिरजा में उनकी प्रार्थना किया करता है। एक ईसाई पादरी स्वामी दयानन्द के चरणों में गिरता है और उसका नाम पड़ता है भक्त स्कॉट। वह प्रतिदिन आता है। एक दिन स्कॉट भक्त नहीं आया। क्यों नहीं आया? आज रविवार है। एक दिन ऋषि दयानन्द गिरजा में जाते हैं और वहाँ उपदेश बन्द हो जाता है। स्वामी जी को उपदेश देने के लिए खड़ा किया जाता है। वह उपदेश देते हैं। यह उपदेश क्या है? वेद कहता है कि सारे संसार को आर्य बनाओ।

दूसरे धर्मों ने अपना-अपना प्रचार किया। किसी ने तलवार से और किसी ने धन से। स्वामी दयानन्द ने धर्म के मार्ग से किया। वह अधर्म के मार्ग से नहीं कर सकते थे। यह क्रियात्मक उपदेश है। आज तो राजनैतिक क्षेत्र में उपदेश दिया जाता है कि यदि धर्म्मोपदेश होगा तो मतभेद उत्पन्न होगा। आप विचार करें कि इतना झगड़ा बढ़ गया है, अत: हमें उदार बनना आवश्यक है। स्वामी दयानन्द के आने से पहिले आर्य्यों की आँखें नीची थीं। स्वामी ने उन्हें ऊँचा कर दिया।

हम आज मथुरा नगरी में शिष्य भाव से आये हुए हैं। अत: यह विचार लेकर जायें कि ऋषि सारे संसार के लिए था। हम भी समस्त संसार के हो जायें। भारत के लिए ही नहीं, एशिया के लिए ही नहीं।

एण्ड्रयूज़ लिखता है कि फ़िज़ी, मॉरिशस और इंग्लैण्डादि द्वीपों में स्वामी का नाम रोशन है। इससे मैं समझता हूं कि उसका नाम सार्वभौम होने वाला है। अब आर्यों का यह कर्त्तव्य हो गया है कि वे अपने जीवन को प्रचार के अर्पण कर दें और जियें तो इसलिए जियें कि वेदों के सन्देश का प्रचार करना है। जब मुसलमान मेरी आँखों के सामने आते हैं तब मुझे उनके अगुआ रहनुमा खाँ की याद आती है और जब ईसाई सामने आते हैं तब भक्त स्कॉट की याद आती है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि लोग इसी प्रकार लोगों का उपकार करते हुए ईश्वर के भक्त बनें।

एक आहुति
अपने आचार्य के लिए.......

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

- मन्त्री

सुना है आज मकतल में हमारा इम्तिहाँ होगा
(रामप्रसाद 'बिस्मिल')

सोमेश 'पाठक'

कवि का अपना एक काव्यलोक होता है। वह लोक जहाँ वह स्वयं मार्तण्ड होता है बल्कि उससे भी कहीं अधिक। उसकी पहुँच स्वयं मार्तण्ड को भी लजाने का साहस रखती है। ब्रह्माण्ड की ऐसी कोई वस्तु अथवा स्थान दीखता या सूझता नहीं है जहाँ तक कवि की कविता अपनी दस्तक न दे आयी हो। अजब सी शक्ति है ये, जो परमात्म-वर्णन की ठान ले तो भक्ति का शिखर भी इसकी छत्रछाया में रहता है, जो वीरता को वश में कर छन्दबद्ध कर दे तो क्षत्रियों की तलवारें युद्ध नहीं करतीं बिजलियाँ कड़काती हैं, जो प्रकृति के किसी मनोहर दृश्य को अचित्र में चित्रित कर दे तो स्वयं सौन्दर्य को भी शरम आ जाये, जो करुणा की ओर रुख कर ले तो और का तो पता नहीं पर हृदयवान् मनुष्यों के लिये सम्भव नहीं कि अपनी अश्रुधारा रोक सकें। न जाने कौन सी दैवीय शक्ति है जिसने कवि और उसकी कविता में ऐसा बेजोड़ सम्बन्ध स्थापित किया जिसे मानव-बुद्धि सुलझाने में अक्षम है। कवि अगर भक्त बन जाये तो कविता भक्ति बन जाती है। कवि योद्धा बन जाये तो वह वीरता बन जाती है। कवि भावुक हो जाये तो वह आँखों से बहती अश्रुधारा और कवि अगर क्रान्तिकारी बन जाये तो कविता क्रान्ति बन जाती है। सच पूछो तो कवि का जीवन ही उसकी कविता है अथवा कवि की कविता ही उसका जीवन है। हम ऐसे ही एक कवि की कविता लिखने बैठे हैं या कहें कि एक क्रान्तिकारी की क्रान्ति।

अमर शहीद पण्डित रामप्रसाद 'बिस्मिल' का जन्म ११ जून सन् १८९७ ई. को खिरनीबाग मुहल्ला शाहजहाँपुर (उ. प्र.) में हुआ था। आपके पिता का नाम पं. मुरलीधर और माता का श्रीमती मूलमती जी था। माता-पिता दोनों ही श्रीराम के बड़े भक्त थे। इसलिये उन्होंने अपने प्रिय पुत्र का नाम भी रामप्रसाद रखा। प्यार से सब उन्हें 'राम' कहकर बुलाते थे। ये राम थे बड़े शरारती, अपनी हरकतों से सारे घर की नाक में दम किये रहते थे। हमारी समझ में तो ये अंग्रेजी हुकूमत की नाक में दम करने का अभ्यास चल रहा था। एक चिनगारी थी जिसे भड़ककर जाज्वल्यमान ज्वाला का रूप धारण करना था। जिसके लिये उन्हें आये दिन डाँट-डपट पड़ती ही रहती थी और कभी-कभी मार भी। पर राम थे कि अपनी आदतों से बाज ही न आते थे। धीरे-धीरे उन्हें चोरी की आदत पड़ गयी। अपने माता-पिता के ही रुपये चुराने लगे। उन रुपयों से उपन्यास खरीदते और उन्हें छिप-छिप कर पढ़ते थे। बहुत छोटी उम्र में ही सिगरेट और भंग का नशा भी करने लगे थे। उन्होंने खुद लिखा है कि वे लगभग ५० से ६० सिगरेट प्रतिदिन पी लेते थे। एक दिन उनकी चोरी पकड़ी गयी और उन प्रेमपूर्ण उपन्यासों को पञ्चतत्त्वों में विलीन होना पड़ा। उपन्यासों की कथा तो यहाँ समाप्त हो गयी पर चोरी और सिगरेट जारी रही। धीरे-धीरे समझ आयी तो चोरी भी छूट गयी। एक पास के पुजारी से प्रभावित होकर उन्होंने व्यायाम और पूजा-पाठ भी प्रारम्भ कर दिया। अब बची थी सिगरेट जिसे उनके सहपाठी सुशीलचन्द्र सेन की सत्संगति ने उनसे सदैव के लिये दूर कर दिया। नित्य व्यायाम करते थे इस कारण शरीर सुन्दर और बलिष्ठ हो गया था। इन्हीं दिनों उनका मुंशी इन्द्रजीत जी से परिचय हुआ। मुंशी जी ने उनको ऋषि दयानन्द के अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' से परिचित करा दिया। बस फिर क्या था भटकते राही को उसकी मंजिल मिल गयी। अब राम प्रसाद वो रामप्रसाद नहीं थे। 'सत्यार्थप्रकाश' ने उनके मानस को पूर्णत: बदल कर रख दिया था। इन्हीं दिनों नगर आर्यसमाज में स्वामी सोमदेव जी का आगमन हुआ। मुंशी इन्द्रजीत जी ने आपको उनकी सेवा में नियुक्त कर दिया। यहीं रामप्रसाद और स्वामी जी में गुरु-शिष्य का सम्बन्ध स्थापित हुआ। गुरु-शिष्य में अनेक राजनैतिक विषयों पर चर्चा होती थी। रामप्रसाद के अन्दर क्रान्ति का बीज इन्हीं स्वामी जी ने बोया था। अब रामप्रसाद एक आदर्श ब्रह्मचारी का जीवन व्यतीत कर रहे थे। देशभक्ति का जुनून उनके

खून में उफनते सागर की तरह हिलोरें मारता था। सच तो ये है वे पैदा ही देश के लिये हुये थे। उनसे अपनी भारत माँ के कष्ट देखे न जाते थे। माँ की छाती के वे जख्म जो नासूर बन गये थे उन्हें अपने जख्म लगने लगे थे। माँ की पीड़ा उनकी अपनी पीड़ा हो गयी थी। तभी तो वे स्वयं को 'बिस्मिल' (जख्मी) कहते थे।

सन् १९१५ में भाई परमानन्द को फांसी (जो कि बदलकर कालापानी कर दी गयी थी) की सजा हुयी। यह खबर सुनते ही बिस्मिल ने ठान लिया था कि अब ब्रिटिश साम्राज्य को समूल नष्ट करना है। चाहे जान ही क्यूँ न चली जाये। अरे! धिक्कार है उस सर पर, जो मातृगौरव की रक्षा न कर सके और धड़ से जुड़ा रहे। बिस्मिल ने कहा भी तो था–

''सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजु-ए-कातिल में है।''

सन् १९१६ में मैनपुरी विप्लव दल के नेता श्री गेंदालाल जी गिरफ्तार हुये। इस समय बिस्मिल की आयु मात्र १९ वर्ष थी। श्री गेंदालाल जी को छुड़ाने के विचार से पहली डकैती उन्होंने इसी उम्र में डाली थी। इस डकैती में बिस्मिल के साथ १५ विद्यार्थी और थे जिनका नेतृत्व बिस्मिल ही कर रहे थे। इससे इतना तो स्पष्ट है कि नेतृत्व की क्षमता उनमें जन्मजात थी। यहाँ कोई यह न समझ ले कि डकैती उनका पेशा था। बल्कि यह तो ब्रिटिश सरकार के खिलाफ उठी एक आवाज थी जिसे हम क्रान्ति कह सकते हैं अथवा दूसरे शब्दों में 'बिस्मिल' की 'कविता'।

डकैती जैसे कार्यों में भी बिस्मिल के अपने उच्च आदर्श थे। उन्होंने कभी किसी मातृशक्ति के सम्मान पर आंच न आने दी। कभी किसी बेकसूर पर जुल्म न होने दिया। जो किया अपने देश, अपनी भारत माँ के लिये किया। उनका स्वार्थ तो ऋषि दयानन्द ने पहले ही उनसे ले लिया था। अब वे अपने लिये करते भी तो क्या करते?

बिस्मिल और उनके साथियों के कारनामों से ब्रिटिश शासन पूरी तरह हिल चुका था। चन्द गद्दारों ने अगर अंग्रेजों का साथ न दिया होता तो यह देश बहुत पहले ही आजाद हो जाता और हमारे वीर-बाँकुरों को फांसी के फन्दों पर झूलना भी न पड़ता। जो हो उस गद्दारी की चर्चा हम यहाँ करना भी नहीं चाहते। खैर!

बिस्मिल को क्रान्तिकारी दल का नेता माना जाने लगा। दूर-दूर से क्रान्तिकारी आ-आकर उनकी सेना में सम्मिलित हो रहे थे। बिस्मिल का एक स्वभाव था कि पहले तो वे किसी कार्य को हाथ में लेते न थे और अगर लेते थे तो उसे बखूबी निभाते थे। एक समय ऐसा भी आया था जब उन्हें उत्तरप्रदेश के क्रान्तिकारियों का नेतृत्व करते हुये बंगाल के क्रान्तिकारियों का भी नेतृत्व करना पड़ा था। जो कि बिस्मिल जैसे नेता के ही बस का काम था।

९ अगस्त सन् १९२५ ई. को बिस्मिल के नेतृत्व में काकोरी काण्ड हुआ। हरदोई से लखनऊ जा रही ट्रेन को काकोरी और आलम नगर के बीच ५२ नम्बर खम्भे के पास रुकवाया गया और उसमें जा रहा सरकारी खजाना लूटा गया। यह लूट लगभग दस हजार रुपये की थी। इसी लूट की गिरफ्तारी में बिस्मिल को भी गिरफ्तार होना पड़ा। बिस्मिल को गोरखपुर जेल में बन्द कर दिया गया। अभियोगों का एक लम्बा सिलसिला चला और अन्त में वही हुआ जो होना था। राजनैतिक षड्यन्त्रों के तहत बिस्मिल को फांसी की सजा सुनाई गयी। इस घटना में एक बिस्मिल ही फांसी पर नहीं चढ़े बल्कि तीन बिस्मिल और थे। वे तीन बिस्मिल राजेन्द्र लाहिड़ी, रोशन सिंह और अशफाकउल्ला खाँ थे।

इसी गोरखपुर जेल में बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा लिखी। जी हाँ। बिस्मिल को बन्दूक ही नहीं कलम भी चलाना आता था। न सिर्फ चलाना बल्कि उच्च कोटि के लेखकों में उनकी गिनती होती है। श्रेष्ठ कवियों में उनका नाम आता है। सारा संसार उनके काव्य का लोहा मानता है। आज भी लोगों की जुँबा पर उनके गीत चढ़े हुये हैं और सदा चढ़े रहेंगे। उनके जीवनकाल में उनकी ११ पुस्तकें प्रकाशित हुयीं। उन्होंने काव्य, इतिहास, अनुवाद आदि साहित्य की अनेक विधाओं में लेखन किया। उन्होंने अनेक पत्र-पत्रिकाओं में भी लिखा। वे 'राम' और 'अज्ञात' आदि उपनामों से लिखा करते थे। साहित्य जगत् भी उनका सदैव ऋणी रहेगा। ये बात और है कि उनके साहित्य के एक बड़े भाग को नष्ट किया जा चुका है। अस्तु।

उन्होंने अपनी मृत्यु के तीन दिन पूर्व अपनी आत्मकथा का अन्तिम अध्याय लिखा जिसकी प्रारम्भिक पक्तियाँ निम्नलिखित हैं।

''आज १६ दिसम्बर १९२७ ई. को निम्नलिखित पक्तियों का उल्लेख कर रहा हूँ जबकि १९ दिसम्बर १९२७ ई. को सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४) को ६:३० बजे प्रात:काल इस शरीर को फांसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है।''

इन पंक्तियों से बिस्मिल के जिगर का पता लगता है। किसी योगी की सी स्थिति मालूम होती है। अरे! जिस मौत की कल्पना तक मनुष्य के चित्त का सन्तुलन खो देती है, वो मौत सामने खड़ी है और बिस्मिल आत्मकथा लिख रहे हैं! यह ऋषि दयानन्द का चमत्कार नहीं तो और क्या था? बिस्मिल! धन्य है तुम्हारी माँ जिसने तुम जैसे वीर को जन्म दिया। उस दिन को कौन भूल सकता है जब तुम्हारी माँ तुमसे जेल में मिलने आयी थी और तुम्हारी आँखों में अपने लिये आँसू देखकर कहने लगी थी-**''मैं तो समझती थी तुमने अपने पर विजय पायी है, किन्तु यहाँ तो तुम्हारी कुछ और ही दशा है। जीवनपर्यन्त देश के लिये आँसू बहाकर अब अन्तिम समय तुम मेरे लिये रोने बैठे हो। इस कायरता से अब क्या होगा, तुम्हें वीर की भांति हँसते हुये प्राण देते देखकर मैं अपने आपको धन्य समझूँगी। मुझे गर्व है कि इस गए-बीते जमाने में भी मेरा पुत्र देश की वेदी पर प्राण दे रहा है। मेरा काम तुम्हें पालकर बड़ा करना था, इसके बाद तुम देश की चीज थे और उसी के काम आ गये। मुझे इसमें तनिक भी दु:ख नहीं है।''**

इतिहास के स्वर्णाक्षरों में उस माँ के ये शब्द सदैव अमर रहेंगे।

आज लगभग डेढ़ साल जेल में रहने के बाद उस शरारती राम को फंासी के फन्दे पर लटकना था। किस अपराध का दण्ड था ये? इसका कि वे अपनी भारत माँ को बेड़ियों में न देख सकते थे या इसका कि भाई परमानन्द की फांसी से वे आहत हो गये थे अथवा इसका कि माँ के जख़्म अपने जख़्म मान लिये थे। भगवान् जाने...।

प्रात:काल नित्यकर्म और सन्ध्या-वन्दन आदि से निवृत्त हो अपनी माँ को एक पत्र लिखा जिसमें कि समस्त देशवासियों के लिये शान्ति का सन्देश था। इसके बाद फांसी के लिये बुलाने वाले आये तो 'वन्देमातरम्' और 'भारत माता की जय' कहते हुये तुरन्त उठकर चल दिये और चलते वक्त उन्होंने कहा था-

''मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,
बाकी न मैं रहूँ न मेरी आरजू रहे।
जब तक कि तन में जान रगों में लहू रहे,
तेरा ही जिक्र या, तेरी ही जुस्तजू रहे।''

फांसी की कोठरी के सामने खड़े होकर उन्होंने कहा था- **I wish the downfall of British Empire. (मैं ब्रिटिश साम्राज्य का नाश चाहता हूँ।) इसके बाद फाँसी के तख्ते पर चढ़कर 'विश्वानि देव...' आदि मन्त्रों का पाठ किया और अपनी कविता का अन्तिम अध्याय पूरा किया। मार्तण्ड अस्त हुआ।**

बिस्मिल के बलिदान की खबर सुनकर गोरखपुर जेल के चारों ओर भारी भीड़ एकत्रित हो गयी। फांसी की कोठरी के सामने वाली दीवार तोड़कर बिस्मिल का शव उनके परिजनों को सौंपा गया। शव को लेकर पूरे गोरखपुर शहर में जुलूस निकाला गया। इस बलिदानी की अन्तिम यात्रा में लगभग डेढ़ लाख की भीड़ थी। बिस्मिल का अन्तिम संस्कार राप्ती नदी के किनारे राजघाट पर हुआ और पूर्ण हुयी बिस्मिल की वो हसरत जिसका उन्होंने कभी जिक्र किया था-

''अब न अहले वलवले हैं और न अरमानों की भीड़,
एक मिट जाने की हसरत अब दिले बिस्मिल में है।''

प्यारे भाइयो! यह एक बिस्मिल की कहानी है, न जाने कितने बिस्मिल इस देश की खातिर स्वयं को होम कर गये। कष्ट होता है जब आज का तथाकथित पठित वर्ग उन्हें गाली देता है। वो भी तुच्छ राजनैतिक स्वार्थों के लिये। अरे! राजनीति करने के लिये तो तुम्हें और भी कई मुद्दे मिल जायेंगे। प्यारे शहीदों की शहादत को बदनाम न करो। उनकी चिताओं पर मेले न लगाओ तो न सही, पर उनकी राख पर लातें तो न मारो। जिस आजादी की आबोहवा में

हम पैदा हुये हैं और साँसें ले रहे है उस आबोहवा की कीमत उन्होंने अपनी साँसों से चुकाई थी। मेरा निवेदन है कि कम से कम एक बार तो बिस्मिल की आत्मकथा पढ़कर देखो। मेरा विश्वास है कि अगर भारत की मिट्टी से बने होगे तो आंखें जरूर नम होंगी और खेद होगा कि जाने-अनजाने उन शहीदों के बारे में क्या-क्या कह गये, जिनकी शहादत की नींव पर हमारी खुशियाँ और इस देश की आजादी टिकी है। याद करो 'हितैषी' की उन पंक्तियों को जिनमें उन्होंने अपने ख्वाबों का नक्शा खींचा था-

इलाही वो दिन भी आयेगा, जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमीं होगी और अपना आसमां होगा।
शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मरने वालों का यही बाकी निशां होगा।

पाठकों के विचार

मूर्तिपूजा: समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का मूल कारण

संजय मोहन मित्तल

हिन्दू धर्म के अनुयायी सामान्यत: धर्मभीरू हैं फिर भी भारत में भ्रष्टाचार का बोलबाला दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। इस विरोधाभास का मूल कारण मूर्तिपूजा ही प्रतीत होता है। महर्षि दयानन्द ने अपने सम्पूर्ण जीवन में मूर्तिपूजा का जमकर विरोध किया। इस कारण उन्हें अनेक बार हिंसा और शारीरिक क्षति भी सहन करनी पड़ी। इसके उपरान्त भी वह मृत्युपर्यन्त मूर्तिपूजा को वेद-सम्मत न मानकर उसका खंडन वा विरोध करते रहे।

वेदो में ईश्वर का स्वरूप

वेदो में यत्र-तत्र-सर्वत्र एक ईश्वर की व्याख्या की गई है, इसके अनेक प्रमाण है। इन प्रमाणों में और सहस्रों अन्य वैदिक ऋचाओं में कहीं भी ईश्वर के मूर्त रूप या भौतिक गुणों का वर्णन नहीं है।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

यजुर्वेद।४०-१।

इस ब्रह्माण्ड में अति सूक्ष्म से लेकर अति विशाल जो भी जगत् है उन सबमें ईश्वर निवास करता है और उनको आच्छादित करता है।

हिरण्यगर्भ: समवर्त्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेक आसीत्।

यजुर्वेद १३-४।

यह सर्वथा विदित है कि वह एकमात्र सृष्टि का जनक, सब जगह समान रूप से उपस्थित, सब जीवों का स्वामी, सबसे पहले विद्यमान था।

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यश:।

यजुर्वेद ३२-३।

मूर्ति पूजा के व्यावहारिक दोष

समान्यत: मूर्ति का उपासक जब प्रतिमा के समक्ष होता है तो सात्त्विक व्यवहार करता है, विनम्रता, सत्य बोलना, धोखाधड़ी ना करना आदि, परन्तु मूर्ति के सामने से हटते ही झूठ और धोखाधड़ी प्रारम्भ कर देता है। चूँकि वह भगवान् को मन्दिर में सीमित एकदेशी मान रहा है, मूर्ति के सामने से हटते ही उसे गलत काम करते कोई परेशानी नहीं होती। यदि अन्तरात्मा ने थोड़ा कचोटा तो शाम को फिर से मन्दिर में कुछ भेंट चढ़ा दी और अगले दिन से फिर भ्रष्ट आचरण शुरू। इसके विपरीत ईश्वर को सर्वव्यापी मानने वाला मनुष्य ईश्वर को सदैव अपने समक्ष पायेगा और इस अहसास मात्र से पापकर्म को ना कर सत्य को आत्मसात करने में सहायता मिलेगी।

वेदों में ईश्वर के स्वरूप को और गहराई में देखें तो ऋग्वेद के पुरुष सूक्त की प्रथम पंक्ति की ओर ध्यान जाता है- **सहस्त्रऽशीर्षा पुरुष: सहस्राक्ष: सहस्रपात्।**

ऋग्वेद १०-९०-१

यह असंख्य सिर, असंख्य आँख और असंख्य हाथ-पाँव वाला पुरुष कहीं परलोक में नहीं बैठा है। यह तो विश्वरूपी परब्रह्म है। असंख्य प्राणियों के सिर उसके सिर हैं, उनकी असंख्य आँखें उसकी आँखें और उनके असंख्य हाथ-पाँव उसके हाथ-पाँव हैं। उस सर्वव्यापी ईश्वर को हर प्राणी के अन्दर देखें। पाप-शोधन स्वत: ही हो जाएगा और वेदों का वाक्य **कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम्** सब ओर गुंजायमान होगा।

आर्यजगत् के समाचार

१. संस्कार विधि- आर्यसमाज कलकत्ता ने महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित संस्कार विधि पर दूरदर्शन के लिये एक धारावाहिक लिखवाने का निर्णय लिया है, जिससे हमारी युवा पीढ़ी को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गए संस्कारों की सही-सही जानकारी हो सके। जो भी विद्वान् या विद्वानों का समूह संस्कार विधि पर धारावाहिक लिखने को इच्छुक हैं, वे सभी विद्वान् आर्यसमाज १९-विधान सरणी, कलकत्ता से सम्पर्क करें। धारावाहिक में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गये सिद्धान्तों को मनोरंजक ढंग से दिखाया जाएगा जिससे यह सभी उम्र के लोगों के लिये रुचिकर हो। सिद्धान्तों से किसी प्रकार का समझौता नहीं होगा। धारावाहिक १०८ कड़ियाँ या इससे अधिक की हो। इस धारावाहिक पर आर्यजगत् के ५ विद्वानों की समिति निर्णय लेगी। सभी विद्वानों को वर्तमान समयानुसार पारिश्रमिक दिया जाएगा। इस धारावाहिक पर आर्यसमाज कलकत्ता का सर्वाधिकार रहेगा। कॉपीराइट भी आर्यसमाज कलकत्ता का ही होगा। **सम्पर्क- ८९६१७७४९४०**

२. प्रकल्प प्रारम्भ- बिना परीक्षा दिये आर्ष प्रणाली से अष्टाध्यायी (प्रथमावृत्ति तथा द्वितीयावृत्ति), धातुवृत्ति, महाभाष्य, निरुक्त तथा अन्य वेदाङ्गों और उपाङ्गों के अध्ययन के लिये जुलाई २०१८ से आर्ष कन्या विद्यापीठ, नजीबाबाद गुरुकुल में नया प्रकल्प प्रारम्भ किया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत प्रवेशार्थी छात्राओं के लिये निम्नाङ्कित अर्हतायें अनिवार्य हैं-

१. वैदिक धर्म के प्रचारार्थ सुयोग्य वेदविदुषी बनने की तीव्र उत्कण्ठा तथा समर्पण भाव हो।

२. छात्रा दसवीं कक्षा उत्तीर्ण हो या तत्समकक्ष योग्यता रखती हो।

३. उपयुर्क्त समस्त पाठ्य विषयों का अध्यापनकाल सप्तवर्षीय है इसलिये निर्धारित सात वर्ष की अवधि से पूर्व छात्रा गुरुकुल छोड़कर नहीं जा सकेगी।

४. छात्रा के माता-पिता या अभिभावक आचार्या की अनुमति से वर्ष में दो बार गुरुकुल में आकर मिल सकेंगे।

५. छात्रा के प्रवेश के तीन मास के अन्दर आचार्या द्वारा उसकी बौद्धिक तथा अनुशासनात्मक वृत्ति का परीक्षण किया जायेगा। इन दोनों दृष्टियों से आचार्या की सन्तुष्टि और सहमति के अनन्तर ही छात्रा अग्रिम अध्ययन के लिये चयन की जा सकेगी।

६. इस वर्ष २०१८-१९ सत्र में इस प्रकल्प के अतिरिक्त सामान्य प्रवेश की प्रक्रिया सम्पन्न नहीं होगी। अर्थात् किसी नवीन छात्रा का किसी अन्य योजना के अन्तर्गत प्रवेश नहीं लिया जायेगा। **सम्पर्क**- ९४१२८२४४२४

३. वार्षिकोत्सव- आर्यसमाज हरजेन्द्र नगर, कानपुर-७ का ४९वाँ वार्षिकोत्सव दि. १३ से १५ अप्रैल २०१८ को विशाल शोभा यात्रा के साथ हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम में डॉ. उत्तमा यति-अजमेर, आचार्य रामप्रसाद-कानपुर, पं. संदीप वैदिक-मुजफ्फरनगर, पं. रामसेवक आर्य-हमीरपुर आदि अनेक उपदेशक, भजनोपदेशक, संन्यासी व वानप्रस्थी उपस्थित थे।

४. वार्षिकोत्सव- आर्यसमाज शास्त्रीनगर, मेरठ का ३८वाँ वार्षिकोत्सव दि. १२ से १५ अप्रैल २०१८ तक मनाया गया। इस महोत्सव में आचार्य चन्द्रदत्त शर्मा-हरिद्वार, स्वामी चन्द्रदेव-मेरठ के आध्यात्मिक प्रवचन एवं पं. दिनेशदत्त आर्य-दिल्ली के सुमधुर भजन हुए। अन्तिम दिन विद्वानों को शॉल व स्मृति चिह्न भेंट करके सम्मानित किया गया।

५. शिलान्यास- देवभूमि उत्तराखण्ड की राजधानी, द्रोण घाटी, देहरादून में स्थित स्वामी श्रद्धानन्द बाल वनिता आश्रम में ११ अप्रैल २०१८ में प्रदेश के मुख्यमन्त्री मा. श्री त्रिवेन्द्रसिंह रावत ने नवीन छात्रावास का शिलान्यास किया। श्री त्रिवेन्द्रसिंह ने अपने सम्बोधन में व्यक्त किया कि महर्षि दयानन्द सरस्वती, शंकराचार्य के उपरान्त पहले भारतीय व्यक्ति थे, जिन्होंने स्वराज तथा स्वतन्त्रता के लिये जनजागृति की। आर्यसमाज के प्रधान डॉ. महेश कुमार शर्मा तथा आश्रम अधिष्ठाता श्री ओमप्रकाश नांगिया ने मुख्यमन्त्री का स्वागत व सम्मान किया।

६. स्थापना दिवस- आर्यसमाज इन्दिरा कॉलोनी,

मजीठा रोड, अमृतसर की ओर से दि. २४ अप्रैल २०१८ को आर्यसमाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में भव्य समारोह आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री वेदप्रकाश प्रधान आर्यसमाज इन्दिरा कॉलोनी ने की।

७. ५१वाँ वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज कण्डा घाट, हिमालय प्रदेश द्वारा दि. १२ से १६ मई २०१८ तक ५१वाँ वार्षिकोत्सव सोल्लास मनाया गया। वार्षिकोत्सव में प्रभात फेरी, शोभायात्रा, मातृदिवस सम्मेलन एवं विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम किये गये। विद्वत्गणों में स्वामी विदेह योगी, दिनेश आर्य पथिक, भानुप्रकाश शास्त्री एवं आचार्य योगेन्द्र शास्त्री के उपदेश हुए।

८. शिविर सम्पन्न- आर्यसमाज जूनागढ़, गुजरात में ३० अप्रैल से ६ मई २०१८ तक शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में १४० बच्चों ने भाग लिया। इसमें योगासन, कराटे, लाठी, तलवार, दंबेश लेझिम, राइफल शूटिंग, एडवेंचर, वैदिक यज्ञ, वैदिक गणित, मानसिक ताकत, अंधश्रद्धा निवारण के वैज्ञानिक प्रयोग, तीरंदाजी, विविध खेल, सूर्य नमस्कार, अकस्मात निवारण आदि का कार्यकम आयोजित किया गया। अन्तिम दिन जूनागढ़ के मेयर, सांसद, गुजरात आर्यसमाज के पदाधिकारियों, अभिभावकों एवं प्रबुद्ध लोगों के बीच शिविर का समापन समारोह उत्साह से मनाया गया। कार्यक्रम का संचालन प्रवीणा आर्य और दीपक आर्य ने किया। मन्त्री कान्तिभाई कीकाणी ने आभार व्यक्त किया।

चुनाव समाचार

९. आर्यसमाज सरदार पटेल मार्ग, खलासी लाइन, सहारनपुर, उ.प्र. के चुनाव में **प्रधान**- श्री विजय कुमार गुप्ता, **मन्त्री**- श्री रविकान्त राणा, **कोषाध्यक्ष**- डॉ. राजवीरसिंह वर्मा को चुना गया।

१०. आर्यसमाज रेलवे रोड, जींद के चुनाव में **प्रधान**- श्री सतबीर जुलानी, **मन्त्री**- श्री पृथ्वीसिंह मोर, **कोषाध्यक्ष**- श्री महासिंह नैन को चुना गया।

११. आर्य पुरोहित सभा, सीताराम बाजार, दिल्ली के चुनाव में **प्रधान**-आचार्य प्रेमपाल शास्त्री, **मन्त्री**- पं. मेघश्याम वेदालंकार, **कोषाध्यक्ष**- आचार्य अभयदेव शास्त्री को चुना गया।

शोक समाचार

१२. महर्षि दयानन्द स्मृति न्यास जोधपुर के पूर्व मन्त्री तथा आर्यसमाज मगरा पूंजला जोधपुर के पूर्व प्रधान एवं सेवानिवृत्त प्रधानाध्यापक **श्री जगदीशसिंह आर्य** का निधन गत १५ अप्रैल को हो गया। परोपकारी परिवार की ईश्वर से प्रार्थना है कि वे परिजनों एवं आत्मीय जनों को इस दु:ख को सहन करने का सामर्थ्य प्रदान करें। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

१३. श्री रामस्वरूप आर्य गाँव गोरखपुर, हिसार निवासी का देहावसान दि. १७ अप्रैल २०१८ को ७५ वर्ष की आयु में हो गया। वे काफी समय से अस्वस्थ चल रहे थे। वे एक आदर्श आर्यसमाजी थे। उनका अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से किया गया। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

१४. डोडियाना निवासी **श्री सोनराज आर्य** का दि. २५ जनवरी २०१८ को निधन हो गया। श्री सोनराज आर्य ने डोडियाना में निरन्तर ११ वर्ष तक गौसेवा की तथा वेद मन्दिर निर्माण हेतु स्वयं की जमीन भी दान कर दी थी। अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से किया गया। परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

१५. ऋषि उद्यान अजमेर में कई वर्षों से निवास कर रहे संन्यासी **स्वामी देवेन्द्रानन्द सरस्वती** का निधन दि. २९ अप्रैल को हो गया। स्वामी जी परोपकारिणी सभा को विभिन्न प्रकल्पों में लगातार सहयोग करते थे। यज्ञ में उनकी गहरी निष्ठा थी। उनका अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से किया गया।

परोपकारिणी सभा उनके निधन पर सभा-परिवार की ओर से शोक संतप्त परिवार के लिये प्रभु से धैर्य की प्रार्थना करती है, साथ ही यह भी प्रार्थना करती है कि वह पुण्यात्मा को अपनी व्यवस्था में स्थान दें।

१६. आर्यनेता **अतरसिंह** क्रांतिकारी का निधन दि. १४ मई २०१८ को ७० वर्ष की आयु में हो गया। उनका अन्तिम संस्कार उनके गाँव नलवा जनपद हिसार, हरियाणा में गुरुकुल द्वारा पूर्ण वैदिक रीति से किया गया।